कुरुक्षेत्र

गरीबी उन्मूलन के प्रयास

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद गांवों के कायाकल्प और गांवों की गरीबी के उन्मूलन के लिए सामुदायिक विकास और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के माध्यम से अनेक उपाय और प्रयास किए गए तथा अरबों-खरबों की धन-राशि खर्च की गई परन्तु गांव आज भी धूरे के ढेर हैं।

इस सम्बन्ध में विनोबाजी का यह कहना कितना सत्य है कि "गरीबों को जो सहायता पहुंचाना चाहते हैं वह गरीबों तक पहुंच ही नहीं पाती। सहायता उन्हीं को पहुंचती है जो सहायता की रस्सी में जोर लगा कर उसे अपनी ओर खींच लेते हैं। सामुदायिक विकास के लाभ ग्रामीण समाज के ऊपर के लोगों तक ही रुके रह जाते हैं और जो वास्तव में जरूरतमन्द हैं उन निर्धनों तक नहीं पहुंच पाते। जरूरत है कि वे उन तक पहुंचें। जब निर्धनों के प्रति करुणा न हो तो जो भी सहायता ऊपर से आती है चाहे वह कितनी कम या ज्यादा क्यों न हो, केवल ऊपर के लोगों तक ही सीमित रह जाती है।" यही कारण है कि गांवों में जो अमीर थे वे और अधिक अमीर होते गए और जो गरीब थे वे और अधिक गरीब होते गए। छोटे और सीमान्त किसान अपनी जोतों को पैसे वालों के हवाले करते रहे हैं।

ज्यादा दूर न जाकर यदि 1964-65 से 1974-75 के दशक की स्थिति का जायजा लें तो पता चलता है कि इस अवधि में खेतिहर मजदूरों की संख्या 310 लाख से बढ़कर 460 लाख और 1977-78 में आकर 560 लाख हो गई। इस तरह प्रति वर्ष 15 लाख की दर से खेतिहर मजदूरों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती रही है।

बंधुआ मजदूरों की हालत तो और भी गई-गुजरी है और इस प्रथा का गरीबी और बेरोजगारी से सीधा सम्बन्ध है। वैसे तो इस प्रथा को कानूनन समाप्त कर दिया गया है परन्तु इसके चंगुल में फंसे लोगों को इतना भी पता नहीं कि इनकी जंजीरें टूट चुकी हैं। इनकी संख्या अभी भी लाखों में है। इस समस्या के दो पहलू हैं। एक कानूनी और एक मानवीय। किसी व्यक्ति को दबाव में रखना उसकी लाचारी का नाजायज फायदा उठाना, उसके श्रम का उपयुक्त मूल्य न चुकाना मानवीय नहीं, पाशविक व्यवहार है। अतः जरूरत है कि इस सामाजिक बुराई के विरुद्ध जनमत जाग्रत किया जाए। जहां तक कानूनी पहलू का सम्बन्ध है, इस प्रथा को पहले ही कानूनी अपराध मान लिया गया है। ऐसे व्यक्तियों को जो किसी को अपने यहां बंधुआ रखकर काम कराते हैं, कानूनन सख्त दण्ड दिया जा सकता है। जरूरत है कि इनमें जागरूकता लाई जाए जिससे वे अपने अधिकारों को पाने में समर्थ हों और हीनता की भावना से मुक्ति पा सकें।

बंधुआ मजदूरों की मुक्ति के लिए पहले बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत जोरदार अभियान चलाया गया था। नए बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत भी उनकी मुक्ति का प्रावधान है और जो मुक्त हो चुके हैं उनको आर्थिक सहायता देकर उनको रोजी-रोटी कमाने लायक बनाने की व्यवस्था है।

जहां तक इस दिशा में सरकारी प्रयासों का सम्बन्ध है, गांवों का कायाकल्प करने तथा गरीबी और बेरोजगारी को दूर करने के लिए भरसक प्रयत्न किए जा रहे हैं। अभी हाल में राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में नए 20 सूत्री कार्यक्रम का जोरदार अनुमोदन कर इस बात पर विशेष बल दिया गया कि गांवों म गरीबी-उन्मूलन के कार्यक्रमों को निष्ठापूर्वक और प्रभावशाली ढंग से कार्यान्वित किया जाए। परिषद की बैठक में खासतौर से संशोधित न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के प्रभावी कार्यान्वियन, सभी समस्याग्रस्त गांवों में पेयजल की व्यवस्था, ग्रामीण सड़कों के निर्माण, भूमिहीनों के लिए आवास स्थल की व्यवस्था तथा ग्रामीण विद्युतीकरण के लिए जोरदार उपाय और प्रयास करने तथा अनुसूचित जातियों, जन-जातियों और समाज के अन्य कमजोर वर्गों के लिए बनाए गए कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वियन की आवश्यकता पर विशेष बल दिया गया। प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का भी यही कहना है कि कठोर परिश्रम, उद्देश्यपूर्ण भावना, अनुशासन तथा कार्यक्रमों के निष्ठापूर्वक तथा प्रभावी कार्यान्वियन से ही देश में गरीबी के विरुद्ध संघर्ष किया जा सकता है और योजना तथा कार्यक्रमों के सामाजिक तथा आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। □

कुरुक्षेत्र

मज़दूर मंज़िल

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष 27 वैशाख–ज्येष्ठ 1904 अंक 7

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मन्त्रालय 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : राधे लाल

आवरण पृष्ठ : कुमारी अलका

इस अंक में — पृष्ठ संख्या

बीस सूत्री कार्यक्रम में गांवों का विकास — 2
ब्रजलाल उनियाल

उत्पादकता वर्ष में कृषि में चौमुखी वृद्धि — 5

ग्रामीण विकास मंत्रालय की गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण — 6

क्षेत्रीय किस्म नियंत्रण प्रयोगशालाएं — 9

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम का लेखा-जोखा — 10
डा० हेमचन्द जैन

ग्रामीण उपभोक्ताओं को सार्वजनिक वितरण की कितनी आवश्यकता — 13
राकेश कुमार अग्रवाल

बस्तर में प्रगति की नई पगडंडियां — 16
जगमोहन लाल माथुर

सहकारी शिक्षण बदलते परिवेश में — 19
यशवन्त सिंह बिसेन

उड़ीसा का गरीबी निवारण कार्यक्रम — 22
डी० एन० दास

ऊर्जा और संचार माध्यमों की भूमिका — 24
वसन्त साठे

भारतीय हथकरघा उद्योग — 26
शकुन्तला धवन

गांवों में रोजगार की समस्या — 28
जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

रेडियो सक्रियता से कृषि के क्षेत्र में क्रांति — 30
शक्ति प्रकाश

केन्द्र के समाचार — 31

खुशहाली की ओर बढ़ते कदम — आवरण पृष्ठ 3

बीस सूत्री कार्यक्रम में गांवों का विकास

ब्रजलाल उनियाल

यों तो प्रधानमंत्री के बीससूत्री कार्यक्रम का उद्देश्य देश की सर्वांगीण उन्नति के लिए कदम उठाना है और इस कार्यक्रम में कोई भी महत्वपूर्ण पहलू अछूता नहीं रहा परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इस कार्यक्रम में गांवों से सम्बन्धित सभी कामों पर विशेष बल दिया गया है क्योंकि देश की बहुसंख्यक जनता ग्रामवासी है और उनकी प्रगति देश की प्रगति है। ग्रामीण विकास विभाग ने इस कार्यक्रम को अमल में लाने के लिए विस्तृत योजनाएं तैयार की हैं और कुछ कदम तो इस दिशा में उठा भी लिए गए हैं।

इन कार्यक्रमों में गांवों में फैलती बेरोजगारी को ध्यान में रखा गया है। इस विषय पर चर्चा करने से पहले संक्षेप में यह बताना भी असंगत न होगा कि बीस सूत्री कार्यक्रम में ग्रामीण विकास विभाग ने क्या कुछ कदम उठाए हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन नीचे किया गया है।

एक संचालन समिति की स्थापना की जा रही है ताकि सम्बन्धित मंत्रालयों के परामर्श से कार्यक्रम पर चर्चा की जा सके और उसे अमल में लाने के लिए उक्त समिति में खाद्य विभाग और वित्त विभाग (बैंकिंग प्रभाग) का प्रतिनिधित्व होगा।

ग्रामीण विकास के सचिव के अधीन एक बीस सूत्री कार्यक्रम कक्ष खोला गया है। यह कक्ष समय-समय पर इस बात की समीक्षा करेगा कि उक्त कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न कामों पर कितनी प्रगति हुई है और समीक्षा के फलस्वरूप यह पता चलेगा कि प्रगति संतोषजनक है या कि कहीं कोई कमी है अथवा क्या और कदम उठाए जाने अपेक्षित हैं। यह भी तय कर लिया गया है कि उक्त कार्यक्रम से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं की वर्तमान स्थिति क्या है और क्या कुछ किया जाना है। लक्ष्य निर्धारित कर लिए गए हैं, उन लक्ष्यों के कार्यान्वयन के लिए किस तरह आगे कार्यवाही की जानी है और कितने समय में उन लक्ष्यों को पूरा करना है, इन सबके बारे में भी योजना तैयार कर ली गई है।

कृषि मंत्रालय राज्य सरकारों को भी इस सम्बन्ध में लिख रहा है कि उन्हें क्या कुछ करना है ताकि इस मंत्रालय से सम्बन्धित कार्यक्रम का शीघ्र और सफल कार्यान्वयन हो।

इस पाठ्यक्रम की गंभीरता को इस बात से आंका जा सकता है कि कृषि तथा ग्रामीण विकास मंत्री स्वयं मासिक प्रगति की समीक्षा करेंगे और इसके लिए वे हर महीने बैठक बुलाएंगे।

इस कार्यक्रम में कृषि व ग्रामीण विकास से संबंधित दो मुख्य बातें हैं। एक तो समेकित ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और दूसरा कृषि योग्य भूमि की सीमाबंदी और फालतू भूमि को ज़रूरत-मंद लोगों में बांटना।

प्रस्तुत लेख में मुख्य रूप से समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, गांव के लोगों को रोजगार मुहैया कराने व प्रशिक्षण और भूमि सुधार पर चर्चा की गई है।

ग्राम्य युवकों के लिए खुद का रोजगार

अपना रोजगार-धंधा खुद चलाने के लिए ग्रामीण युवकों के प्रशिक्षण की एक राष्ट्रीय योजना 15 अगस्त, 1979 से चालू की गई थी। इस योजना का उद्देश्य युवकों में बेरोजगारी को खत्म करना है। ग्रामीण युवकों को आवश्यक दक्षता और प्रौद्योगिकी में प्रशिक्षण देकर उन्हें इस काबिल बनाना कि वे अपना धंधा खुद ही कर सकें। अब इस योजना के अंतर्गत 18 से 35 वर्ष की आयु के बीच के युवकों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था है। समेकित ग्रामीण विकास योजना का लक्ष्य प्रत्येक ब्लाक में 600 परिवारों को प्रशिक्षण देना है। इनमें 400 परिवार को कृषि और उससे संबंधित धंधों में और शेष 200 को उद्योगों, नौकरियों, व्यापारों आदि में प्रशिक्षण दिया जाएगा। इस योजना के अंतर्गत आधारभूत ढांचे को और मजबूत बनाया जाएगा।

इस कार्यक्रम में सर्वोच्च प्राथमिकता सब से गरीब परिवारों को दी जाती है। पहले यह देखा जाता है कि कौन-सा परिवार गरीब है और चुने हुए लोगों की दिलचस्पी किस धंधे में है। उसी के अनुसार कार्यक्रम तैयार किया जाता है। महिलाओं, अनुसूचित जातियों और जनजातियों, भूतपूर्व फौजियों और उन लोगों को, जिन्होंने कि राष्ट्रीय वयस्क शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत नौ महीने का पाठ्यक्रम पूरा किया है, तरजीह दी जाती है। सभी प्रकार के प्रशिक्षण की व्यवस्था का प्रयत्न किया जाता है। यह प्रशिक्षण औद्योगिक यूनिटों, होशियार कारीगरों, शिल्पियों और दक्ष कार्यकर्त्ताओं द्वारा दिया जाता है।

उक्त कार्यक्रम में दिसम्बर, 1981 तक 2,00,757 ग्राम्य युवकों को प्रशिक्षित किया गया था। इसमें से

13,357 ने खुद का रोजगार शुरू कर दिया। इसी प्रकार 1980-81 के दौरान 1,21,330 लोगों को प्रशिक्षण दिया गया जिनमें से 39,940 ने खुद का धंधा शुरु कर दिया।

उक्त कार्यक्रम की खूबी यह है कि साथ-साथ इस प्रशिक्षण का मूल्यांकन होता रहता है। मूल्यांकन करने वाले लोग अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ होते हैं। वे बताते हैं कि कहां क्या कमी है और कहां क्या सुधार अपेक्षित है। अब तक ऐसी सात मूल्यांकन रिपोर्टें मिल चुकी हैं। यहां तक कि सुझाए गए सुधारों को प्रशिक्षण के बीच में ही लागू करने का प्रयत्न किया जाता है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम अब छठी योजना का एक नियमित अंश बन गया है। अब इसका खर्चा आधा-आधा राज्य सरकारें व केन्द्र सरकार उठाती हैं। जिन दिनों खेतीबाड़ी का काम नहीं रहता उन दिनों भी खाली युवक आमदनी के लिए कुछ कर सकते हैं, इस योजना में इस बात का ध्यान रखा गया है। ग्रामीण आधारभूत ढांचे को मजबूत बनाकर टिकाऊ सामुदायिक सम्पदा का निर्माण ही इसका लक्ष्य है। इससे गांव की अर्थव्यवस्था का शीघ्र सुधार होगा और गांव के लोगों की आय का स्तर बराबर बढ़ता रहेगा।

पिछले वर्ष कितना रोजगार लोगों को मिल सका, इसके पूरे आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। फिर भी अनुमान लगाया जाता है कि लगभग 45 करोड़ मानव दिवसों (मैन डेज) का कुल रोजगार मुहैया किया गया। सितम्बर, 1981 तक के तीन महीनों में (1981-82 वर्ष के दौरान) 663.71 लाख मानव दिवसों का रोजगार मुहैया किया गया। आशा की जाती है कि इस वर्ष कुल 35 करोड़ जन दिवसों का रोजगार मुहैया किया जा सकेगा।

प्रशिक्षण

प्रत्येक जिले के लिए 1982-83 के अन्त तक एक दीर्घावधि भावी योजना तैयार की जाएगी।

जिन क्षेत्रों में जैसे जनजाति क्षेत्रों, पहाड़ी इलाकों और दूर दराज दुर्गम स्थानों में नए संस्थान खोले जाएंगे और प्रशिक्षण के आधारभूत ढांचे के लिए सरकार 1983-84 तक पूरी सहायता देगी। इस प्रशिक्षण में प्रबन्ध-कला को भी शामिल किया जाएगा।

गांवों की शिक्षा प्रणाली को गांवों की आवश्यकता के अनुरूप ढाला जाएगा। इसमें व्यावसायिक या तकनीकी शिक्षा को भी ध्यान में रखा जाएगा।

शिल्पियों को सुधरे तौर-तरीकों के बारे में जानकारी दी जाएगी। 1983-84 तक ऐसे केन्द्र स्थापित किए जाएंगे जहां सीखने के साथ-साथ कमाना भी सिखाया जाएगा। लाभ प्राप्त करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को 500 रुपये तक का औजार (टूल) मुफ्त दिया जाएगा।

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का श्रीगणेश तो सन् 1978-79 में किया गया था। शुरू-शुरू में देश के 2000 ब्लाकों को इस कार्यक्रम के लिए चुना गया था। तब यह भी निर्णय किया गया था कि शेष क्षेत्रों में भी इस कार्यक्रम को विभिन्न चरणों में अमल में लाया जाएगा। विचार यह था कि 300 ब्लाकों को हर साल लिया जाएगा। गांधीजी के पावन जन्म दिवस पर यानी 2 अक्तूबर 1980 को यह निर्णय किया गया कि इस कार्यक्रम को देश के सभी भागों में लागू किया जाए। इस प्रकार देश भर में फैले हुए 5011 ब्लाक इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ले लिए गए।

ध्येय

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का ध्येय यह था कि घर-घर जाकर सर्वेक्षण किया जाए और तब हर ब्लाक के लिए बारीकी से जांच पड़ताल करने के बाद योजना तैयार की जाए ताकि छोटे किसानों, सीमान्त किसानों, खेतिहर मजदूरों और ग्रामीण शिल्पियों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाया जा सके। हर ब्लाक में हर साल 600 परिवारों को औसतन लेना है। इस प्रकार लक्ष्य तो यह रखा गया है कि छठी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक एक करोड़ 50 लाख परिवारों को लिया जाए। इस कार्यक्रम के लिए छठी योजना में 15 अरब रुपये का आवंटन है। इस राशि में से आधी राशि तो भारत सरकार खर्च करेगी और शेष आधी राशि राज्य सरकार। इस राशि का उपयोग मुख्यतः जरूरतमन्द किसानों को सहायता देने के लिए किया जाएगा। इसके अलावा 30 अरब रुपये की राशि को संस्थागत ऋणों के लिए रखा जाएगा। इस प्रकार इस मद पर कुल 46 अरब रुपये का खर्च होने की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक ब्लाक को पहले साल में प्रति वर्ष 5 लाख रुपये दिए गए थे और इस साल 6 लाख रुपये प्रति ब्लाक को दिए गए और अंतिम शेष तीन सालों में प्रतिवर्ष 8 लाख रुपये दिए जाएंगे। छोटे किसानों को दी जाने वाली सहायता 25% है, उससे भी छोटे किसानों को, जिन्हें सीमान्त किसान कहा जाता है और खेतिहर मजदूरों और ग्रामीण शिल्पिओं को 33-1/3% और जनजाति के लोगों को 50% सहायता दी जाएगी।

पहले दो वर्षों में तो इसके अन्तर्गत कुछ ही ब्लाक लिए गए थे और इन ब्लाकों को दी जाने वाली राशि भी एक-सी नहीं थी। फिर भी इस अवधि में लगभग 21 लाख लोगों को इस योजना का लाभ पहुंचाया था। पर 1980-81 से इस कार्यक्रम ने जोर पकड़ा है। अब इसे सभी ब्लाकों में लागू कर दिया गया है और आवंटन की राशि भी एक-सी है यानी कोई भेद-भाव नहीं बरता गया। 1980-81 के दौरान कुछ उल्लेखनीय सफलताएं ये रहीः--

उपलब्धियां

(क) अब यह कार्यक्रम 2600 ब्लाकों के बजाय 5011 ब्लाकों में लागू किया जा रहा है।

(ख) विभिन्न संस्थाओं में तालमेल बैठाने की दृष्टि से, विभिन्न कार्यक्रमों का विलीनीकरण कर दिया गया है। इस विलीनीकृत एजेन्सी को जिला ग्रामीण विकास एजेन्सी कहा जाता है जो कि जिलास्तर पर सभी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को अमल में लाने का काम करती है।

(ग) ब्लाक स्तर पर क्या कुछ किया जाता है, इस संबंध में विस्तृत

व्यावहारिक दिशानिर्देश जारी किए गए हैं।

(घ) अब अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए लाभ प्राप्त करने वालों की संख्या और साधन दोनों को ही 20 प्रतिशत से बढ़ाकर 30 प्रतिशत कर दिया गया है।

(च) समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम से संबंधित जितने सरकारी और गैरसरकारी कर्मचारी हैं उनके लिए कार्यशालाओं और सम्मेलनों का आयोजन किया गया। इन कार्यशालाओं और सम्मेलनों का आयोजन राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, हैदराबाद; कृषि बैंकिंग महाविद्यालय, पूणे; आई. पी. ए., लखनऊ और ऐसे ही दूसरे संस्थानों ने किया।

(छ) कृषि व ग्रामीण विकास मंत्रालय ने भी जिला स्तर अधिकारियों की 11 ऐसी कार्यशालाओं का नियोजन किया। इनमें 700 से भी अधिक अधिकारियों ने भाग लिया।

(ज) इस कार्यक्रम के अन्तर्गत किए गए काम का लेखा-जोखा लेने के लिए राष्ट्रीय स्तर के व क्षेत्रीय स्तर के सम्मेलन आयोजित किए गए।

(झ) ब्लाक का प्रशासन पिछले दिनों कुछ शिथिल पड़ गया था, उसे सुदृढ़ बनाने के लिए एक योजना के अन्तर्गत 50 प्रतिशत सहायता दी गई।

यों तो 31 मार्च, 1981 तक 30 लाख लोगों को लाभ पहुंचाने का लक्ष्य था पर केवल 28 लाख लोग ही लाभान्वित हो सके। इनमें 25 प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति/जनजाति के थे।

छोटी सिंचाई योजना के लिए सहायता दी जाएगी। सहायता विशेष रूप से छोटे और सीमान्त किसानों को दी जाएगी। व्यावहारिक पोषण, परिवार कल्याण आदि पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

प्रत्येक राज्य 30-9-82 तक इस बात का पता लगाएगा कि किसी चुने हुए क्षेत्र में निश्चित कार्यक्रम के अन्तर्गत लोगों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाने में कितनी सफलता मिली है।

भारत सरकार ने खेतों की जोतों को सीमा में रखने पर हमेशा से जोर दिया है। यद्यपि हर राज्य में भूमि संबंधी कानून अलग-अलग हैं, फिर भी यह कोशिश की जाती रही है कि राष्ट्रीय स्तर पर भूमि सुधार नीति अपनाई जाए। पिछले तीन दशकों में इस बात की बराबर कोशिश की जाती रही है कि जोतों को एक विशेष सीमा के अन्दर रखा जाए। इन्हीं प्रयत्नों का नतीजा यह हुआ कि लगभग 21 लाख एकड़ भूमि जोकि निश्चित की गई सीमा से अधिक होने के फलस्वरूप फालतू थी, भूमिहीन लोगों में बांटी गई। 1972 में कानून फिर बदला गया। इस के कारण, अब 40.44 लाख एकड़ भूमि को फालतू घोषित किया गया जिसमें से सरकार ने 26.67 लाख एकड़ भूमि का अधिग्रहण कर लिया है और उसमें से भी 18.41 लाख एकड़ भूमि बांट दी गई है।

यद्यपि भूमि सुधार का प्रशासन राज्य करता है फिर भी भारत सरकार समय-समय पर स्थिति का जायजा लेती रहती है और राज्य सरकारों का ध्यान कुछ खास कमियों की तरफ खींचती है। अब भी बहुत-सी जमीन बांटी जानी बाकी है। क्योंकि कहीं तो अदालती पेचीगियां हैं और कहीं भूमि खेती योग्य नहीं है।

प्रस्तावित उपाय

अदालत में बहुत से मामले पड़े हैं। कृषि मंत्री ने सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों को लिखा है कि मुकदमों को जल्दी निपटाने की कोशिश की जाए। भूमि के मालिकों ने अगर विलम्ब के आदेश ले लिए हैं तो उन पर कार्यवाही की जाए।

संविधान की नवीं सूची में नए भूमि सुधार कानून को शामिल करने का प्रस्ताव है। अभी इस विषय में विधि मंत्रालय से सलाह मशविरा जारी है। कानूनी रुकावटें दूर होने पर सुधार जल्दी ही लागू किए जा सकेंगे।

जमीनों का खातों में सही-सही दर्ज होना बहुत जरूरी है। ऐसा न होने से बहुत-से मामलों में किसानों को ऋण मिलने में दिक्कत पेश आती है और सम्पत्ति के झगड़े भी नहीं निपटते। इसलिए कोशिश की जा रही है कि तमाम प्रविष्टियां सही-सही हों और अद्यतन हों।

उपसंहार

यदि सरकारी तंत्र उपर्युक्त कार्यक्रमों को पूरी निष्ठा और मुस्तैदी के साथ कार्यान्वित करता है और गरीब किसान और अनुसूचित जातियों आदि के लोग सहयोग दें, जैसी कि पूरी आशा है तो सरकार की योजनाएं सफल होंगी और गांवों की कायापलट होनी शुरू हो जाएगी। कुछ अच्छा काम हुआ है पर वह आत्म-संतुष्टि नहीं देता, बहुत कुछ करना शेष है और भविष्य उज्जवल है। □

कुंजलाल उनियाल,
के-38 एफ,
साकेत, नई दिल्ली-110017

तेल की हर बूंद कीमती है, इसे बचाइये !

उत्पादकता वर्ष में कृषि में चौमुखी वृद्धि

बहु-उद्देश्यीय कार्य योजना

केन्द्र सरकार ने उत्पादकता वर्ष में कृषि के चौमुखी विकास के लिए एक व्यापक कार्यक्रम की रूप रेखा तैयार की है। इस बहुउद्देश्यीय कार्य योजना के अन्तर्गत केन्द्र ने अनाज, दालों, तिलहनों और डेरी, कुक्कुट और समुद्री उत्पादों के उत्पादन में वृद्धि करने का निर्णय किया है।

इस सम्बन्ध में कृषि और सहकारिता सचिव की अध्यक्षता में एक कक्ष का गठन किया गया है जो कि उत्पादकता वर्ष और नए 20-सूत्री कार्यक्रम दोनों के लिए इस कार्य योजना के कार्यान्वियन पर निगरानी रखेगा।

वर्ष में कम से कम 10 प्रतिशत बंजर भूमि को कृषि योग्य भूमि बनाने का प्रस्ताव है। भूमि सम्बन्धी आंकड़ों के अनुसार देश में 97 लाख हेक्टेयर भूमि बंजर है। उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा में चल रहे क्षारीय भूमि को कृषि योग्य भूमि बनाने के व्यापक कार्यक्रम को और तेज किया जाएगा। इन तीनों राज्यों में 17 लाख हेक्टेयर भूमि क्षारीय है। इस में से 2.4 लाख हेक्टेयर भूमि को पहले ही कृषि योग्य बना दिया गया है। इस वर्ष कम से कम 50,000 हेक्टेयर क्षारीय भूमि को कृषि योग्य बनाने का प्रस्ताव है।

दालों और तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने पर मुख्य रूप से ध्यान दिया जाएगा। दालों का उत्पादन बढ़ाकर 135 लाख टन और तिलहनों का 130 लाख टन उत्पादन करने का प्रस्ताव है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए एक पांच सूत्री कार्य योजना बनाई जा रही है। मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों में 9 लाख हेक्टेयर भूमि पर सोयाबीन की खेती की जाएगी। इस समय 7.86 लाख हेक्टेयर भूमि पर सोयाबीन की खेती की जा रही है। गुजरात और अन्य राज्यों में सिंचाई परियोजनाओं की कमानों के सिंचित क्षेत्रों में गर्मी के मौसम में मूंग-फली की खेती के कार्य में तेजी लाई जाएगी और इस प्रकार 11 लाख हेक्टेयर भूमि में इस प्रकार की खेती की जाएगी। उत्तर प्रदेश में चालू कार्यक्रम को और तेज करने के अलावा पंजाब, हरियाणा, राजस्थान और उड़ीसा जैसे क्षमता वाले राज्यों में ग्रीष्म काल में मूंग की खेती के लिए विशेष कार्यक्रम शुरू किया जाएगा। इस प्रकार इस वर्ष 1980-81 के 6.2 लाख हेक्टेयर क्षेत्र की तुलना में 10 लाख हेक्टेयर भूमि पर मूंग की खेती करने का प्रस्ताव है।

प्रशिक्षण, अनुसंधान और विस्तार के काम में लगे संस्थानों को एक हजार गांव दिए जाएंगे। इस समय ऐसे 400 संस्थान हैं जिनमें किसानों के प्रशिक्षण केन्द्र, ग्राम सेवक प्रशिक्षण केन्द्र, कृषि विज्ञान केन्द्र, कृषि विश्वविद्यालय, अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजनाएं, सहकारी संस्थाएं और उर्वरक उत्पादक शामिल हैं।

इस कार्यक्रम को सफल बनाने के उद्देश्य से पर्याप्त मात्रा में बेहतर किस्म के बीजों की उपलब्धता को सुनिश्चित करने पर अधिक जोर दिया जाएगा। अधिक फसल देने वाले अनाज, दालों तथा तिलहनों की सुधरी हुई किस्मों के बीजों का उत्पादन वर्ष 1980-81 में हुए 25 लाख क्विंटल से बढ़ा कर वर्ष 1982-83 के दौरान 40 लाख क्विंटल कर दिया जाएगा। राष्ट्रीय बीज निगम से 8.5 लाख क्विंटल सुधरे हुए बीज तैयार करने को कहा जाएगा जो कि वर्ष 1981-82 में उत्पादित बीजों से 2 लाख क्विंटल अधिक है।

अन्य प्रमुख उर्वरकों के सम्बन्ध में उर्वरक का उपयोग (वर्तमान स्तर 61 लाख टन से बढ़ाकर 72 लाख टन) तक हो गया है। इस प्रकार 11 लाख की वृद्धि होगी। यह चालू वर्ष के उपभोग स्तर से 18 प्रतिशत अधिक होगी।

एक वर्ष में 75000 बायो गैस संयंत्र लगाने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जोरदार प्रयास किए जाएंगे। छठी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत 50 करोड़ रु. की लागत से ऐसे 4 लाख संयंत्र लगाने का लक्ष्य है।

कीटों से फसलों को बचाने के लिए कीटनाशक दवाइयों का उपयोग 10,000 टन तक बढ़ा दिया जाएगा और 4.5 लाख हेक्टेयर भूमि पर इन कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव किया जाएगा। इन कीटों पर व्यापक रूप से निगरानी रखने के कार्य के लिए पूरे देशभर में वर्तमान 35 कीट निगरानी केन्द्र देश के 155 खण्डों पर निगरानी रखेंगे।

कृषि सम्बन्धी विभिन्न गतिविधियों की कार्य कुशलता में सुधार लाने के लिए किसानों को 20,000 बीज सह-उर्वरक ड्रिल्स, 1500 औजार किट्स, एक लाख सुधरे हुए औजार और 3 लाख हाथ के औजार वितरित करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किए जाएंगे।

सूखा क्षेत्रों में, फसलों को सुधारने के विभिन्न उपायों, पानी छिड़कने का प्रबन्ध कार्य, भूमि संरक्षण और वन रोपण के लिए 50 हजार हेक्टेयर भूमि को काम में लाया जाएगा।

25 सूत्री कार्य योजना में दूध उत्पादन में 3 करोड़ 46 लाख टन और 1350 करोड़ अण्डों के उत्पादन को सुनिश्चित किया जाएगा। केन्द्रीय क्षेत्र कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 1982-83 के दौरान समुद्रीय मछली का उत्पादन 16.95 लाख टन से बढ़ाकर 18.63 लाख टन और देशीय मछली का उत्पादन 9.55 लाख टन से बढ़ाकर 10.70 लाख टन कर दिया जाएगा।

सामाजिक वानिकी कार्यक्रम के अन्तर्गत 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर 200 करोड़ पौध लगाई जाएगी। □

ग्रामीण विकास मंत्रालय की गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण

जम्मू तथा कश्मीर में ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों अर्थात् समन्वित ग्रामीण विकास, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम, मरूभूमि विकास कार्यक्रम, ट्राइसेम, कृषि विपणन तथा ग्रामीण गोदामों की योजनाओं की पुनरीक्षा करने हेतु 11 व 12 फरवरी, 1982 को जम्मू में एक राज्य स्तरीय सम्मेलन हुआ। अतिरिक्त सचिव (ग्रा. वि.) तथा मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों और वित्तीय संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने इस सम्मेलन में भाग लिया। इसी प्रकार इस मंत्रालय द्वारा उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में चलाए जा रहे ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों अर्थात समन्वित ग्रामीण विकास तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम की प्रगति की पुनरीक्षा करने के लिए 16 फरवरी, 1982 को शिलांग में एक क्षेत्रीय सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में असम, मेघालय, नागालैंड, अरुणाचल प्रदेश तथा मिजोरम के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। कृषि तथा ग्रामीण राज्य मंत्री और इस मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों ने सम्मेलन के विचार-विमर्श में भाग लिया था। सम्मेलन की अध्यक्षता मेघालय के ग्रामीण विकास मंत्री ने की थी।

समन्वित ग्रामीण विकास के अन्तर्गत योजनाओं के अनुमोदन हेतु समीक्षाधीन अवधि के दौरान तमिलनाडु, पंजाब तथा मध्य प्रदेश के बारे में राज्य स्तरीय संस्वीकृति समिति की बैठकें हुई थीं।

समीक्षाधीन अवधि के दौरान समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यान्वियन हेतु तथा 2 से 4 हेक्टेयर तक की भूमि वाले किसानों द्वारा शुरू किए गए पीछे के बचे लघु सिंचाई कार्यों को पूरा करने के लिए जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को 1284.59 लाख रुपये की धनराशि बंटित की गई थी, इससे अब तक बंटित कुल धनराशि 7930.83 लाख रुपये हो गए हैं।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

समीक्षाधीन अवधि के दौरान कार्यक्रम के अन्तर्गत 4744.00 लाख रुपये की धनराशि तथा 1,11,250 मीटरी टन खाद्यान्नों की मात्रा आबंटित की गई है जिनका ब्यौरा नीचे दिया गया है:—

राज्य/केन्द्र शासित क्षेत्र	बंटित नकद धनराशि (लाख रुपयों में)	बंटित खाद्यान्नों की मात्रा (मीटरी टन)
1. हिमाचल प्रदेश	60.00	1,000
2. पंजाब	63.00	2,150
3. राजस्थान	117.00	4,000
4. त्रिपुरा	15.00	500
5. हरियाणा	40.00	1,250
6. आन्ध्र प्रदेश	474.00	15,750
7. मध्य प्रदेश	660.00	11,000
8. कर्नाटक	414.00	7,000
9. असम	200.00	3,000
10. तमिलनाडु	370.00	12,500
11. पश्चिम बंगाल	674.00	11,250
12. उड़ीसा	410.00	7,000
13. नागालैण्ड	10.00	100
14. उत्तर प्रदेश	835.00	27,900
15. मिजोराम	—	150
16. केरल	402.00	6,700
योग	4,744.00	1,11,250

इस प्रकार, चालू वर्ष के दौरान विभिन्न राज्यों/केन्द्र शासित क्षेत्रों को अब तक 15704.00 लाख रुपये तथा 2,61,250 मीटरी टन खाद्यान्नों की मात्रा बंटित की गई है।

सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम

सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित राज्यों को 290.606 लाख रुपये की धनराशि बंटित की गई है।

राज्य का नाम	बंटित धनराशि (लाख रुपयों में)
1. तमिलनाडु	84.695
2. उत्तर प्रदेश	24.668
3. कर्नाटक	110.225
4. उड़ीसा	60.000
5. हरियाणा	11.018
योग	290.606

मरूभूमि विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत गुजरात राज्य को 15.27 लाख रुपये की धनराशि बंटित की गई है।

''ट्राइसेम'' योजना की गति में तेजी लाने तथा आधारभूत ढांचे को मजबूत बनाने हेतु अनेक प्रस्ताओं को अनुमोदित करने के लिए कई मुद्दों पर विचार करने हेतु 27-2-1982 को ट्राइसेम के बारे में केन्द्रीय परियोजना संचालन समिति की एक बैठक हुई।

ट्राइसेम योजना के अन्तर्गत निम्नलिखित संस्थाओं को आधारभूत सहायता संस्वीकृत की गई।

1.	खारा जल मछली फार्म, आन्ध्र प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय काकीनाडा	6,250.00 रुपये प्रथम किस्त
2.	कृषक प्रशिक्षण केन्द्र, क्षेत्रीय सूअर प्रजनन फार्म सीलीसिह, वी०पी०ओ० दुर्तलांग, ऐजवाल	72,750.00 रुपये। प्रथम किस्त

ट्राइसेम योजना के बारे में विस्तृत अन्तर-मंत्रालयीन पुनरीक्षा किया गया था तथा निम्नलिखित मुख्य नीतियां तैयार की गईं।

(क) ''ट्राइसेम'' को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम से अलग एक योजना के रूप में जारी रखना होगा। इसमें गरीबी की रेखा से नीचे बसर करने वाले परिवारों पर भी ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए लेकिन यह जरूरी नहीं कि निर्धनतम व्यक्ति का ही चयन किया जाए। चुने युवाओं की अभिरुचि तथा जोखिम उठाने की क्षमता पर बल दिया जाना चाहिए।

(ख) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 600 परिवारों के लक्ष्य के अलावा ट्राइसेम के अन्तर्गत प्रति-खण्ड 40 युवकों का लक्ष्य होना चाहिए।

(ग) देश के प्रत्येक जिले में एक संयुक्त ग्रामीण प्रशिक्षण केन्द्र तथा जिला आपूर्ति और विपणन केन्द्र की व्यवस्था करके समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम/ट्राइसेम को आधारभूत सहायता सुलभ करने के लिए एक व्यापक प्रयास किया जाना चाहिए। इसे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत आधारभूत ढांचा विकसित करने के लिए निर्धारित 10 प्रतिशत निधियों में से वित्त की व्यवस्था की जाए। अधिक निधियों की आवश्यकता होने पर इन्हें केन्द्रीय निधियों से सुलभ किया जाना चाहिए।

रक्षा मंत्रालय ने ट्राइसेम को भूतपूर्व सैनिकों के लिए लागू करने के प्रश्न पर विचार-विमर्श करने के लिए एक बैठक बुलाई थी। यह निर्णय लिया गया था कि ट्राइसेम योजना को भूतपूर्व सैनिकों के लिए लागू नहीं किया जा सकेगा क्योंकि उनमें से कई गरीबी की रेखा से ऊपर बसर करने वाले परिवारों से संबंधित हैं। तथापि, रक्षा मंत्रालय ट्राइसेम की तरह ही एक योजना तैयार करने पर सहमत हो गया है, जिसमें ग्रामीण विकास मंत्रालय ने सहयोग देने का वचन दिया है।

ग्रामीण प्रौद्योगिकी के विकास हेतु परिषद्

ग्रामीण प्रौद्योगिकी के विकास हेतु परिषद् के नियमों तथा वितरण-पत्र को अन्तिम रूप दे दिया गया है। सोसायटी को पंजीकृत किया जाने वाला है।

संयुक्त ग्रामीण प्रशिक्षण केन्द्र

इंजीनियरिंग तथा ग्रामीण प्रौद्योगिकी संस्थान, इलाहाबाद को संयुक्त प्रशिक्षण केन्द्रों के बारे में परियोजना दस्तावेज तैयार करने के लिए एक परामर्शदायी परियोजना दी गई थी। इसे मंत्रालय को प्रस्तुत किया गया था इस पर अन्तर-मंत्रालयीन बैठक में भी विचार-विमर्श किया गया। इस दस्तावेज को डी. ए. एन. आई. डी. ए. की सहायता प्राप्त करने हेतु अब आर्थिक कार्य विभाग को भेजा जा रहा है।

ग्रामीण विकास में प्रशिक्षण तथा अनुसंधान से संबंधित शीर्ष केन्द्रों को मजबूत बनाने के निमित्त विशेषज्ञ समिति ने राज्य सामुदायिक विकास एवं पंचायती राजसंस्थान और हरीश चन्द्र माथुर राज्य लोक प्रशासन संस्थान का निरीक्षण करने के लिए उदयपुर तथा जयपुर का दौरा किया था। समिति ने मुख्य सचिव तथा राज्य के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ विचार-विमर्श किया था। समिति ने इन दोनों संस्थानों को क्रमशः 6.75 लाख रुपये तथा 13.25 लाख रुपये की सहायता की सिफारिश की है।

गोष्ठियों तथा कार्यशालाओं का आयोजन

निम्नलिखित गोष्ठियां तथा कार्यशालाएं आयोजित की गयी थीं:

(1) स्टेट बैंक आफ इण्डिया, स्टाफ ट्रेनिंग कालेज, गोहाटी में 15 व 16 फरवरी, 1982 को उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के लिए समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम हेतु संस्थागत वित्त के बारे में क्षेत्रीय गोष्ठी।

(2) भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, नई दिल्ली में 22 से 24 फरवरी, 1982 तक ग्रामीण विकास के लिए विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के बारे में राष्ट्रीय कार्यशाला।

(3) कृषि बैंकिंग कालेज, पुणे में 24-25 फरवरी, 1982 को पश्चिम क्षेत्र हेतु समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिए संस्थागत वित्त के बारे में एक क्षेत्रीय गोष्ठी।

(4) हिमाचल प्रदेश राज्य लोक प्रशासन संस्थान, शिमला में 2 से 4 मार्च, 1982 तक उत्तरी तथा मध्य क्षेत्रों के लिए ग्रामीण विकास कार्यक्रम में युवकों की भागीदारी से सम्बन्धित राष्ट्रीय गोष्ठी।

1982-83 के लिए प्रशिक्षण अनुसूची

वर्ष 1982-83 के लिए प्रशिक्षण अनुसूची तैयार कर ली गयी है। इसमें 11 राष्ट्रीय सम्मेलन, 18 राष्ट्रीय गोष्ठियां/कार्यशालाएं, 20 क्षेत्रीय कार्यशालाएं तथा 22 राज्य स्तरीय कार्यशालाएं रखी गई हैं। इसके अलावा, पूर्ण केन्द्रीय सहायता से लगभग 1000 खण्ड स्तरीय गोष्ठियों की एक केन्द्रीय योजना के अन्तर्गत आयोजित करने का प्रस्ताव है।

क्षेत्रीय सहयोग

इस मंत्रालय ने 23 व 24 फरवरी, 1982 को कोलम्बो में दक्षिणी एशिया क्षेत्र में राष्ट्रों के ग्रामीण विकस से संबंधित कार्यदल की बैठक में भाग लिया था। क्षेत्रीय सहयोग हेतु अनेक महत्वपूर्ण सिफारिशें की गईं जिन्हें विदेश सचिवों की बैठक में उठाए जाने के लिए विदेश मंत्रालय को भेजा जा रहा है।

राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान

समीक्षाधीन अवधि के दौरान निम्नलिखित पाठ्यक्रमों, गोष्ठियों तथा कार्यशालाओं का आयोजन किया गया।

(1) ग्रामीण समस्याओं को सूचना देना पुनर्निवेशन तंत्र में सुधार करना (फरवरी 4–10, 1982)

(2) समन्वित क्षेत्र आयोजना (फरवरी 10 से 2 मार्च, 1982 तक)

(3) सूखाग्रस्त क्षेत्रों में जल संभरों की व्यवस्था के बारे में कार्यशालाएं (फरवरी 17–23, 1982)

कृषि विपणन

संस्वीकृति समिति ने 6-2-1982 और 22-2-1982 को हुई अपनी बैठकों में 30 चुने नियमित बाजारों, पिछड़े क्षेत्रों में 3 थोक बाजारों तथा 168 प्राथमिक ग्रामीण बाजारों के विकास के लिए 416.028 लाख रुपये की केन्द्रीय सहायता की मंजूरी हेतु प्रस्ताव अनुमोदित किए थे।

परियोजना निधिदायी समिति ने अपनी 6-2-1982 तथा 22-2-1982 को हुई बैठकों में बिहार में 74 ग्रामीण गोदामों तथा मध्य प्रदेश में 47 ग्रामीण गोदामों के निर्माण के लिए प्रस्ताव अनुमोदित किए थे।

इस मंत्रालय के दो अधिकारियों को 15-2-1982 से 19-3-1982 तक कोलम्बो प्लान के अन्तर्गत ग्रामीण विकास-प्रबन्ध तथा नीतियों के बारे में इग्लैण्ड में होने वाली गोष्ठी में भाग लेने हेतु नामित किया गया था।

इस मंत्रालय के एक अधिकारी को 23 व 24 फरवरी, 1982 को कोलम्बो में दक्षिणी एशिया में क्षेत्रीय सहयोग के कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण विकास से संबंधित कार्यकारी दल की बैठक में भाग लेने हेतु नामित किया गया था।

इस मंत्रालय के एक अधिकारी और गुजरात तथा राजस्थान की राज्य सरकारों के दो प्रतिनिधियों को 28 फरवरी से 12 मार्च, 1982 तक कृषि परियोजना सेवा केन्द्र, काठमाण्डू नेपाल में एशिया तथा प्रशान्तीय देशों के लिए समन्वित ग्रामीण विकास केन्द्र द्वारा आयोजित किए जा रहे उप क्षेत्रीय समन्वित ग्रामीण विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लेने के लिए नामित किया गया था।

जात-पांत और छुआछूत का जहर हमारे समाज को खोखला कर रहा। इन समाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए युवा वर्ग को आगे आना होगा।

क्षेत्रीय किस्म नियंत्रण प्रयोगशालाएं

केन्द्र सरकार बीजों, उर्वरकों तथा कीटनाशक दवाइयों की किस्म के परीक्षण के लिए सभी आवश्यक उपकरणों से सुसज्जित आधुनिक क्षेत्रीय प्रयोगशालाएं स्थापित करेगी। केन्द्रीय कृषि मंत्री राव बीरेन्द्र सिंह द्वारा, उत्पादकता वर्ष तथा नए 20 सूत्री कार्यक्रम की सफलता को सुनिश्चित करने के लिए अच्छी किस्म के बीजों के उत्पादन तथा वितरण की व्यवस्थाओं की समीक्षा हेतु आयोजित वरिष्ठ अधिकारियों की एक बैठक के दौरान यह निर्णय लिया गया।

मंत्री महोदय ने बाजार में बिक रहे घटिया किस्म के बीजों पर गहरी चिन्ता व्यक्त की। उन्होंने किस्म नियंत्रण के लिए बेहतर उपाय अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने कहा कि बीज उर्वरक तथा कीटनाशक दवाओं जैसी कृषि के लिए आवश्यक वस्तुओं के किस्म नियंत्रण के लिए उपयुक्त आधारभूत ढांचों के साथ-साथ समन्वित व्यवस्था का गठन किया जाना चाहिए ताकि अपराधियों के साथ सख्ती से निपटा जा सके। उन्होंने बीजों को प्रमाण पत्र देने वाली कुछ एजेंसियों के कार्य पर भी असंतोष व्यक्त किया और कहा कि प्रमाण पत्र देने वाली ऐसी अयोग्य एजेंसियों से निपटने के लिए कानून का और कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए।

राव बीरेन्द्र सिंह ने कहा कि तिलहनों और दलहनों के उत्पादन में वृद्धि करना नए 20 सूत्री कार्यक्रम का एक अंग है। दलहनों के 228380 क्विटल प्रामाणित बीजों तथा 341000 क्विटल तिलहनों के उत्पादन के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया है।

मंत्री महोदय ने अच्छी किस्म के बीजों के उत्पादन और वितरण के लिए उत्तरदायी दो कम्पनियों--राष्ट्रीय बीज निगम तथा भारतीय राज्य फार्म निगम--के काम-काज की भी समीक्षा की। राष्ट्रीय बीज निगम ने वर्ष 1980-81 में एक करोड़ 28 लाख रुपये का मुनाफा कमाया। आशा है निगम 1981-82 के दौरान भी लाभ कमाने की यही गति बनाए रखेगा। भारतीय राज्य बीज निगम का कार्य-निष्पादन बहुत ही अच्छा रहा और उसने पिछले वर्ष में 80 लाख रुपये के घाटे के मुकाबले वर्ष 1980-81 के दौरान चार लाख 90 हजार रुपये का मुनाफा कमाया।

राष्ट्रीय बीज निगम द्वारा उत्पादकता वर्ष 1982 को ध्यान में रखते हुए, विशेष प्रयास करके अपनी उत्पादकता बढ़ाने का प्रस्ताव है। वर्ष 1981-82 में बीजों का कुल उत्पादन सात लाख 30 हजार क्विटल से बढ़ कर 1982-83 में आठ लाख 90 हजार क्विटल हो जाएगा और इस प्रकार 22 प्रतिशत की वृद्धि होगी। निगम ने तिलहनों और दलहनों के बीजों के उत्पादन को बढ़ाने के विशेष उपाय किए हैं।

भारतीय राज्य फार्म निगम ने भी वर्ष 1982 में अपनी उत्पादकता बढ़ाने की योजनाएं बनाई हैं। निगम की वर्तमान फसलों की धनता 89 प्रतिशत है। इसे 1982 के दौरान बढ़ाकर 115 प्रतिशत करने का प्रस्ताव है।

मंत्री महोदय ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि बीज संगठनों द्वारा इस वर्ष उतनी बड़ी मात्रा में बीजों का निर्यात नहीं किया गया जितना पिछले वर्ष किया गया था। राष्ट्रीय बीज निगम द्वारा 1980-81 के एक लाख 75 हजार क्विटल बीजों के स्थान पर इस वर्ष 30 हजार क्विटल बीजों का निर्यात किया गया। उनका यह विचार था कि बीजों के निर्यात पर विचार करने से पूर्व किसानों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

भूमि अधिग्रहण अधिनियम में संशोधन

राव बीरेन्द्र सिंह ने अपने मंत्रालय से सम्बद्ध संसदीय सलाहकार समिति की बैठक में बताया कि सरकार का भूमि अधिग्रहण अधिनियम में संशोधन का दृढ़ निश्चय है और इसके लिए संसद के आगामी सत्र में विधेयक प्रस्तुत किया जाएगा।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के बारे में कुछ सदस्यों की टिप्पणी के संदर्भ में उन्होंने बताया कि राज्यों के लिए यह अनिवार्य है कि प्रति व्यक्ति प्रति दिन एक किलोग्राम खाद्यान्न मजदूरी के अंश के रूप में दिया जाए।

कुछ सदस्यों ने समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत, लोगों द्वारा बैंकों से ऋण प्राप्त करने में आई कठिनाइयों के बारे में शिकायत की। यह बताया गया कि रिजर्व बैंक द्वारा ऐसा न करने के निर्देश जारी किए जाने के बावजूद कुछ शाखा प्रबंधक अभी भी 5,000 रु. तक के ऋणों के लिए जमानत मांगते हैं। मंत्री महोदय ने कहा कि इस बारे में रिजर्व बैंक के साथ बातचीत की जा रही है और रिजर्व बैंक ने आश्वासन दिया है कि इस निर्णय के कार्यान्वयन के लिए हर सम्भव प्रयास किया जाएगा।

राव बीरेन्द्र सिंह ने सदस्यों को सूचित किया कि लाभ भोगियों के लिए पर्याप्त ऋण की उपलब्धता को सुनिश्चित करने हेतु वित्त मंत्रालय के बैंकिंग प्रभाग तथा बैंकरों के साथ बैठकें आयोजित की जा रही हैं। उन्होंने कहा कि किसी भी प्रकार की ऋण-कटौती के बावजूद समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिए ऋण उपलब्ध कराया जाएगा।

कुछ सदस्यों ने कहा कि लाभ भोगियों का पता लगाते समय लोगों के एक ऐसे वर्ग को नजरअंदाज किया जा रहा है जो वास्तव में गरीब है। राव बीरेन्द्र सिंह ने कहा कि मंत्रालय के निर्देशों के अनुसार लाभ भोगियों के चयन-कार्य में ग्राम सभाओं को शामिल किया जाता है। उन्होंने कहा कि उनका मंत्रालय यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाएगा कि निर्देशों का ठीक तरह से पालन हो। मंत्री महोदय ने कहा कि स्थानीय निवासियों को आपत्ति-पत्र प्रस्तुत करने का मौका भी दिया जाएगा।

मंत्री महोदय ने कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों में, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा प्राप्त सुविधा के बारे में ग्रामीण लोगों को पूरी जानकारी नहीं है। उन्होंने कहा कि ग्रामीण विकास के लिए विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत उपलब्ध लाभों के बारे में जन साधारण को सूचित करने के लिए, सभी राज्य सरकारों के साथ मिलकर एक प्रचार अभियान शुरू किया जाना चाहिए।

कुछ सदस्यों ने आलू उत्पादकों की समस्याएं उठाईं। मंत्री महोदय ने कहा कि राष्ट्रीय कृषि विपणन संघ (नेफेड), राष्ट्रीय उपभोक्ता सहकारी संघों तथा राज्य विपणन संघों से उचित दर पर आलू खरीदने को कहा जाएगा। उन्होंने रेल द्वारा आलू लाने-लेजाने की व्यवस्था में सहायता करने का भी सदस्यों को आश्वासन दिया।

ग्रामीण विकास में महिलाओं की भूमिका

राव वीरेन्द्र सिंह ने समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में अधिक से अधिक महिलाओं को शामिल करने की आवश्यकता पर बल दिया है। मंत्री महोदय ने कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी को समाप्त करने के हमारे अभियान के सन्दर्भ में जो कि 20 सूत्री कार्यक्रम का एक मुख्य मुद्दा है, इस कार्यक्रम का महत्व बहुत बढ़ गया है। राव वीरेन्द्र सिंह ने ये विचार ग्रामीण विकास में महिलाओं को शामिल करने के बारे में एक राष्ट्रीय गोष्ठी के उद्घाटन अवसर पर कहे।

ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा आयोजित इस गोष्ठी में ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं के कल्याण की विभिन्न योजनाओं की पूर्ति की समीक्षा की गई।

महिलाओं की उन्नति के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा शुरू किए गए विभिन्न उपायों की जानकारी देते हुए मंत्री महोदय ने बताया कि राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों को सलाह दी गई है कि स्व-रोजगार के लिए प्रशिक्षित किए जा रहे युवकों में कम से कम एक तिहाई महिलाएं होनी चाहिए। इस सन्दर्भ में यह बताया गया कि तमिलनाडु सरकार समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत प्रत्येक खण्ड में कम से कम 200 महिलाओं को प्रशिक्षण देने का निर्णय ले चुकी है।

विभिन्न कार्यक्रमों में महिलाओं को अधिक से अधिक शामिल करने को ध्यान में रखते हुए राव वीरेन्द्र सिंह ने इस बात पर बल दिया कि गांवों में ग्राम सेवकों/सेविकाओं और सामाजिक कल्याण कार्यकर्ताओं में से कम से कम आधी संख्या उसी क्षेत्र की महिलाओं की होनी चाहिए।

महिला कल्याण संगठनों और महिला मण्डलों द्वारा किए जा रहे कार्यों का जिक्र करते हुए राव वीरेन्द्र सिंह ने कहा कि ऐसे संगठनों का पता लगाए जाने की जरूरत है जो इस क्षेत्र में वास्तविक कार्य कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि ऐसे संगठनों को सहायता उनके कार्यनिष्पादन के आधार पर देनी चाहिए। □

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम का लेखा-जोखा

✳ डा० हेमचन्द जैन

देश में गरीबी की रेखा के नीचे के स्तर पर जी रहे 30 करोड़ 20 लाख लोगों में से 25 करोड़ 10 लाख व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। निर्धन तबकों की ग्रामीण जनसंख्या प्रमुखतः भूमिहीन मजदूर, लघु एवं सीमान्त किसान, ग्रामीण शिल्पकार, दस्तकार, मछलीमार और आदिवासी हैं। इस गरीब वर्ग के पास कोई स्थायी सम्पत्ति, भूमि या पशुधन नहीं है अगर है भी तो नाममात्र की सम्पत्ति है। इसके अतिरिक्त, इन गरीबों को वर्ष भर पूर्ण-रोजगार भी प्राप्त नहीं होता है। वर्ष 1979-80 में हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार, ग्रामीण निर्धनतम व्यक्तियों को प्रतिदिन 170 पैसा ही उपयोग के लिए उपलब्ध है। इतनी कम राशि में, दो वक्त का भोजन, वस्त्र-मकान आदि बुनियादी आवश्यकताओं को जुटाना कठिन ही नहीं, असंभव है।

संक्षेप में गरीबी न केवल एक बड़ी समस्या है वरन् देश के सामने एक विकट समस्या है। बेकारी एवं मंहगाई के कुप्रभाव से गरीब वर्ग ही अत्यधिक पीड़ित है तथा शहरी निर्धनता भी ग्रामीण गरीबी का परिणाम है। इस समस्या से निपटने के लिए, छठी योजना में ग्रामीण क्षेत्र के विकास तथा ग्रामीण दरिद्रता पर प्रहार करने के लिए, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, और ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम का क्रियान्वयन किया गया है।

कार्यक्रम के मुख्य तत्व

यद्यपि न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम को 5 वीं पंचवर्षीय योजना से प्रारंभ किया गया है, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि इसके पहले की योजनाओं में इस प्रकार की गतिविधियों का कोई प्रावधान नहीं था। देश की पहली पंचवर्षीय योजना की शुरुआत से ही सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र पर विशेष ध्यान दिया गया तथा पर्याप्त वित्तीय प्रावधान भी किए गए हैं। इन्हीं सब सेवा कार्यक्रमों को एकीकृत करके, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के रूप में अब विशेष मान्यता प्रदान की गई है। छठी पंचवर्षीय योजना के प्रमुख लक्ष्यों में एक लक्ष्य न्यूनतम आवश्यकता कार्य-क्रम के अन्तर्गत निर्धारित लक्ष्यों को उपलब्ध करना है। इस योजना के प्रतिवेदन के अनुसार "आम आदमी के विशेषतः आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के लोगों के जीवन-स्तर में एक न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से सुधार, जो इस ढंग का हो कि एक निर्धारित अवधि के अंदर देश के सभी भाग राष्ट्रीय स्वीकृत स्तर पर पहुंच जाएं।" वास्तव में यह कार्यक्रम राष्ट्रीय स्वीकृत मानदण्ड के अनुसार, सामाजिक सेवाएं मुहैया करने

को जरूरत पर जोर देता है। इस कार्यक्रम के प्रमुख अवयव निम्नलिखित हैं:—

(1) प्राथमिक शिक्षा, (2) ग्रामीण स्वास्थ्य (3) ग्रामीण पेयजल सम्पूर्ति, (4) ग्रामीण सड़कें, (5) ग्रामीण विद्युतीकरण, (6) ग्रामीण भूमिहीनों के लिए आवास सहायता (7) शहरी गंदी बस्तियों में पर्यावरण सुधार (8) पौष्टिक आहार।

प्रारंभिक शिक्षा एवं ग्रामीण स्वास्थ्य न केवल मानवीय पूंजी निर्माण में मदद करते हैं, वरन् इनसे "सभी को समान अवसर प्राप्ति" का उद्देश्य भी प्राप्त होता है। ग्रामीण सड़कें तथा ग्रामीण विद्युतीकरण के द्वारा गांवों में आर्थिक आधारिक संरचना के विस्तार में सहायता मिलती है। इसका सुलाभ गांवों के उच्च वर्ग के सम्भ्रान्त किसानों को ही अधिक प्राप्त होने की संभावना है। वास्तव में ग्रामीण पेयजल सम्पूर्ति, ग्रामीण सड़कें तथा ग्रामीण विद्युतीकरण के फैलाव से शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों के मध्य अंतर को कम करने में मदद मिलती है। ग्रामीण भूमिहीन श्रमिकों को आवास सहायता, शहरी बस्तियों में पर्यावरण सुधार तथा पौष्टिक आहार गतिविधियों के विस्तार से वास्तव में गरीबों को अत्यधिक सुलाभ प्राप्त होने की संभावना है।

इन कार्यक्रमों को विलग रूप में चालू न करके, अधिकतम फायदे प्राप्त करने के उद्देश्य से "पैकेज" के रूप में चालू किया गया है।

कार्यक्रम के मुख्य लक्ष्य

छठी पंचवर्षीय योजना में प्रारम्भिक शिक्षा क्षेत्र का लक्ष्य निर्धारित यह किया है जिससे 6 से 11 वर्ष के समस्त बालकों में से 95 प्रतिशत तथा 11 से 14 वर्ष के 50 प्रतिशत बालक दाखिला पा सकें। इसके लिए 906 करोड़ रुपये का प्रावधान योजना में किया गया है। ग्रामीण-स्वास्थ्य के मूल ढांचे को और अधिक सुदृढ़ करने पर जोर दिया गया है। इस कार्यक्रम का लक्ष्य प्रत्येक गांव की एक हजार जनसंख्या में एक सामुदायिक स्वास्थ्य सेवक, मैदानी क्षेत्रों में 5 हजार जनसंख्या और पहाड़ी तथा जनजाति क्षेत्रों में 3 हजार जनसंख्या के लिए एक उपकेन्द्र, मैदानी क्षेत्रों में 30 हजार जनसंख्या और पहाड़ी तथा जनजाति क्षेत्रों में 20 हजार जनसंख्या के लिए एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और 1 लाख जनसंख्या अथवा एक सामुदायिक विकास खण्ड में एक सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित करने का उद्देश्य निश्चित किया गया है। छठी योजनावधि में सामुदायिक स्वास्थ्य सेवकों की संख्या 1.40 लाख से बढ़कर 3.60 लाख हो जाएगी। उप केन्द्रों की संख्या 50 हजार से बढ़कर 90 हजार, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 5400 से 6000 एवं विशेष स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 1000 से 2000 होने का लक्ष्य है। देश में 174 अतिरिक्त सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों को स्थापित करने का प्रावधान किया गया है। ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम के लक्ष्यों को उपलब्ध करने के लिए योजना में 577 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। ग्रामीण पेयजल सम्पूर्ति के अन्तर्गत 1985 तक देश के 152475 समस्यागत गांवों में से केवल पहाड़ी एवं मरुस्थली दुर्गम गांवों को छोड़कर सभी में 2007 करोड़ रुपये का प्रावधान करके पेयजल उपलब्ध कराने का लक्ष्य निर्धारित किया है। ग्रामीण सड़कों के क्षेत्र में योजना के अंतिम वर्ष तक 20000 गांवों को 1165 करोड़ रुपये की व्यवस्था करके ऐसी सड़कों से जोड़ दिया जाएगा, जो सभी मौसमों में चालू रहें। योजना के आरंभ में विद्युतीकरण के लिए बचे हुए 115165 गांवों में से कम से कम 40 प्रतिशत गांवों को 301 करोड़ रुपये खर्च करके विद्युतीकरण का लक्ष्य रखा गया है। योजनाकाल में 354 करोड रुपये खर्च करके, भूमिहीन मजदूरों को मकान उपलब्ध कराने के लिए 60 लाख 80 हजार परिवारों को मकान के लिए स्थान देने का लक्ष्य है और लगभग 30 लाख 60 हजार परिवारों में से 25 प्रतिशत को निर्माण के लिए सहायता देने का लक्ष्य है। शहरी गंदी बस्तियों में पर्यावरण सुधार कार्य-क्रम के अन्तर्गत 151 करोड़ रुपये व्यय करके 1 करोड़ अतिरिक्त आबादी को गंदी बस्तियों के दूषित पर्यावरण से बाहर लाने का लक्ष्य है। पौष्टिक-आहार कार्यक्रम पर 219 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान योजना में किया गया है। इसके अन्तर्गत वर्तमान में 1 करोड़ 74 लाख बच्चों को एकीकृत बाल विकास सेवा के अन्तर्गत दी जाने वाली सुविधाएं चालू रहेंगी तथा वर्ष 1985 तक 50 लाख बच्चों एवं 5 लाख महिलाओं को पौष्टिक आहार सुविधा के अन्तर्गत और लाया जाएगा।

देश में बुनियादी आवश्यकताएं

यद्यपि साक्षरता एवं प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में देश में विगत 30 वर्षों के योजनाबद्ध विकास के जरिए प्रगति हुई है। साक्षरता का प्रतिशत जो वर्ष 1951 में 16.7 था, बढ़कर 1981 में 36.17 हो गया है। अभी भी निरक्षरता देश में 60 प्रतिशत से अधिक आबादी में विद्यमान है। साक्षरता के क्षेत्र में असंतुलन मौजूद है। शहरों की अपेक्षा गांवों में तथा पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में साक्षरता का विस्तार कम हो पाया है। 1981 की जनगणना के अनुसार 46.74 प्रतिशत पुरुषों की तुलना में, देश में साक्षरता का प्रतिशत महिलाओं में 24.88 ही है। शहरों की तुलना में गांवों में साक्षरता बहुत कम है। पिछड़े हुए की अपेक्षा आदिवासियों में साक्षरता का अनुपात कम है। प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के फलस्वरूप स्कूली बच्चों की संख्या में अभिवृद्धि तीव्र गति से हुई है, लेकिन शहरों और गांवों, पुरुषों तथा महिलाओं और आदिवासियों एवं गैर आदिवासियों में असमानता बहुत अधिक मौजूद अभी भी है। "जनशिक्षा" की धारणा बलवती होने के कारण, संख्यात्मक उन्नति तो प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में खूब हुई है, लेकिन गुणात्मक उपलब्धियों के लिहाज से देश में पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है। गुणवत्ता को विपरीत दिशा में मोड़कर जनसमूह को प्रारम्भिक शिक्षा मुहैया करके, देश शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति हासिल करने की नीति पर अमल कर रहा है। असन्तुलन और असमानताएं इस क्षेत्र में प्रगति के साथ-साथ उत्पन्न हो रही हैं, लेकिन सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में शिक्षा का अब तक का विस्तार, अन्य न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अवयवों की तुलना में सबसे अच्छा है।

जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में स्थिति अब भी संतोषप्रद नहीं हो पाई है। राष्ट्रीय

स्वास्थ्य संरचना का आवश्यक वर्धन अभी भी होना है। ग्राम-स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य सेवक का प्रयोग असफल ही रहा है। इस प्रयोग को अभी भी गंभीरता से क्रियान्वयन करना शेष है। शिक्षा पर होने वाले कुल व्यय का लगभग 1/10 भाग ही जन-स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च किया जा रहा है। तथा आम ग्रामीण जनता का स्वास्थ्य पर व्यय, सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यय की अपेक्षा बहुत अधिक है। अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं की अपर्याप्तता विद्यमान है और ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा मृत्युदर अधिक होने तथा ग्रामीण बच्चों की अकाल मृत्यु दर प्रति हजार 136 है, जबकि शहरों में 70 ही है। इसका एक प्रमुख कारण गांवों में स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव होना है।

पेयजल सुविधा से अभी भी सभी गांव सुलाभ प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। एक आकलन के अनुसार संपूर्ण देश में 1 लाख 52 हजार समस्यामूलक दुर्गम गांव हैं। इन गांवों में वर्ष 1974 तक जल संपूर्ति सुविधा पहुंचाने के संबंध में कुछ नहीं किया गया। ग्रामीण स्वास्थ्य पर दूषित पानी से पैदा होने वाले रोगों से बचाव तभी संभव है, जब प्राथमिकता के आधार पर देश के सभी गांवों में स्वच्छ पेयजल उपलब्ध होने लगे।

ग्रामीण विकास के लिए आधारिक सम्बन्धों का पर्याप्त विस्तार होना जरूरी है। शहरी एवं गांवों की दूरी सड़कों का जाल बिछाकर कम की जा सकती है। यदि गांवों में न्यूनतम आवश्यकताओं की सुविधाएं मुहैया हो जाएं तब गांवों से शहरों की ओर भागने की प्रवृत्ति पर कुछ सीमा तक अंकुश लग सकता है। देश के 5 लाख 76 हजार गांवों में से 4 लाख गांव ऐसे हैं जो सभी मौसमों में चालू सड़कों से जुड़े हुए नहीं हैं। देश के कतिपय राज्यों में जहां शहरों एवं गांवों में एकरसता लाने की कोशिशें की गई हैं, सड़कों का फैलाव गांवों में अच्छा हुआ है।

ग्रामीण औद्योगीकरण के लिए पानी, सड़कों के साथ-साथ विद्युत सम्पूर्ति भी अत्यावश्यक है। कृषि के आधुनिकीकरण तथा ग्रामोद्योग के सुचारु विस्तार के लिए सभी गांवों में विद्युतीकरण करना जरूरी है। गांव अभी भी इस मामले में बहुत पीछे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर आवश्यकताओं की तुलना में कम बिजली पैदा हो रही है। शहरी उपभोग तथा उद्योगों में बिजली की खपत गांवों की तुलना में अत्यधिक है। ग्रामीण विद्युतीकरण की कमजोर प्रगति के लिए कुछ हद तक गांव भी उत्तरदायी हैं। छठी योजना के बाद भी विद्युत प्रकाश से बचे हुए 60 प्रतिशत गांव आगामी 10 वर्षों के भीतर ही इस सुविधा के अन्तर्गत लाए जा सकेंगे।

गांवों के कमजोर वर्ग को आवासीय भूखण्ड उपलब्ध कराने तथा मकान बनाने के लिए आर्थिक सहायता उपलब्ध करना बहुत जरूरी है। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में अच्छी आवास व्यवस्था से जहां एक ओर ग्रामीणों को रोजगार व उनकी आय में वृद्धि होगी, वहीं दूसरी ओर श्रम-उत्पादकता पर भी अच्छा असर पड़ेगा। इस सर्वेक्षण प्रतिवेदन के अनुसार अच्छी ग्रामीण आवास व्यवस्था से राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि होगी।

अभी तक ग्रामीण आवास व्यवस्था पर उतना ध्यान नहीं दिया गया, जितना आवश्यक था। 1971 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में लगभग 50 लाख लोग बेघर थे, परन्तु वर्ष 1978 में 67 हजार घरों का ही ग्रामीण क्षेत्रों में निर्माण किया गया। वर्ष 1972 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार यह पाया गया था कि 2 करोड़ 30 लाख घर ग्रामीण क्षेत्र के निम्न वर्ग के ऐसे घर हैं, जिनका पुनर्निर्माण अत्यावश्यक है। इस कारण से वर्ष 1979 में राष्ट्रीय गृह निर्माण संगठन द्वारा पूरे देश में 1 करोड़ 50 लाख घर बनाने का प्रावधान रखा था। परन्तु आवास निर्माण हेतु विभिन्न संस्थाओं द्वारा जो सहायता लगभग 800 करोड़ रु. प्रदान की गई, उसका लाभ भी केवल शहरी क्षेत्र को हुआ है और ग्रामीण आवास का विकास नहीं किया जा सका है। उद्देश्य यह है कि वर्ष 1990 तक सभी भूमिहीन मजदूर परिवारों को आवास सहायता प्रदान करके गांवों में उनका स्वयं का घर हो जाए।

पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या औद्योगिक रूप से विकसित देशों में एक गंभीर समस्या है। एक अनुमान के अनुसार पश्चिम में बसने वाली विश्व की केवल 7 प्रतिशत आबादी 40 प्रतिशत प्राकृतिक साधनों का उपभोग करती है, 60 प्रतिशत धन पर परोक्ष व अप्रत्यक्ष कब्जा किए हुए है और 50 प्रतिशत प्रदूषण पैदा करने की हिस्सेदार है। इन देशों में अंधाधुंध बहु औद्योगीकरण प्रदूषण मुख्यतः बेतहाशा बढ़ती हुई जनसंख्या और गरीबी के अनिवार्य प्रतिफल के रूप में ज्यादा बढ़ा है। महानगरों में व नगरों में उद्योगों का जमाव बढ़ता जा रहा है तथा प्रदूषण हावी होता जा रहा है। भारत के गांव भी प्रदूषण के खतरे की सीमा के भीतर होते जा रहे हैं। जनसंख्या में तीव्र वृद्धि व इसका शहरों की ओर पलायन के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी है। पर्यावरण संरक्षण के लिए तथा बढ़ते हुए प्रदूषण के दायरे के बारे में देश पूर्ण रूप से सजग है। शहरों में गंदी बस्तियों में रहने वाले कमजोर वर्ग के लोगों को वर्ष 1990 तक शत प्रतिशत शुद्ध वातावरण युक्त निवास सुविधाओं के अन्तर्गत लाने का लक्ष्य है।

भारत में कुपोषण व न्यून पोषण की समस्या ग्रामीण क्षेत्रों में ज्यादा है। यह समस्या शहरों व गांवों में रहने वाले कमजोर तबके के लोगों में गंभीर रूप में मौजूद है। गरीबी का अभिशाप ही इस समस्या का कारण है। रोगों की प्रतिरोधात्मक शक्ति, इस वर्ग में पौष्टिक आहार के अभाव में कम होने के कारण, रोगों से भी यही वर्ग भीषण रूप में पीड़ित होता है। इस कारण से पौष्टिक आहार कार्यक्रम को अनवरत चालू रखकर अत्यधिक गरीबों को पोषक तत्वों की उपलब्धि-सुविधा प्राप्त होती है।

योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम को प्राथमिक मान्यता प्रदान करके इस समस्या के प्रति राज्य की प्रतिबद्धता उजागर होती है। योजनाबद्ध विकास की पहली वरीयता भी यह है। यदि देश के लगभग 50 प्रतिशत ग्रामीण आबादी गरीब है, तब यह और भी जरूरी है। आर्थिक विकास की पूर्व शर्त के रूप में, राष्ट्रीय

[शेष पृष्ठ 15 पर]

ग्रामीण उपभोक्ता को

सार्वजनिक वितरण की

कितनी आवश्यकता ?

राकेश कुमार अग्रवाल

अभाव ग्रामीण उपभोक्ता की नियति का अंग बन गए हैं। यहां तक कि आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति के लिए भी उसे पर्याप्त भागदौड़ करनी पड़ती है। धनाभाव के कारण सामान्य ग्रामीण को और भी अधिक कठिनाइयों से गुजरना पड़ता है। इस दिशा में एन. सी. डी. सी. द्वारा प्रेरित ग्रामीण उपभोक्ता योजना व सरकार द्वारा संचालित सार्वजनिक वितरण प्रणाली से ग्रामीण उपभोक्ता को कुछ सम्बल मिला है। किन्तु आज भी उसको रोजमर्रा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पैंठों पर निर्भर रहना पड़ता है जहां उसको घटिया वस्तु महंगी मूल्य पर प्राप्त होती है। ग्रामीण उपभोक्ता को इस शोषण से बचाने के लिए वस्तुओं की उपलब्धता को किस सीमा तक बढ़ाना होगा इस आशय से ग्रामीण उपभोक्ता का पैंठों पर निर्भरता का आकलन सर्वेक्षण के आधार पर किया गया है।

प्राचीन काल में आवश्यकताएं सीमित होने के कारण उत्पादन तथा वितरण की जटिलता नहीं थी। साधारणतया परिवार आत्म निर्भर थे। अपनी आवश्यकता की वस्तुएं स्वयं पैदा कर ली जाती थीं। कालांतर में सभ्यता के विकास के साथ आवश्यकताओं में वृद्धि होने के कारण विनिमय का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। सामाजिक व आर्थिक परिप्रेक्ष्य में मनोरंजन तथा एक स्थान पर अधिक वस्तुओं की प्राप्ति के उद्देश्य से पैंठों तथा मेलों का आयोजन किया जाने लगा। असंगठित बाजार होने के बाद भी पैंठें ग्रामीण उपभोक्ताओं को वस्तुएं और सेवाएं नियमित रूप से उपलब्ध कराने के कारण गांवों में अत्यधिक लोकप्रिय हैं। देश में लगभग 22,000 पैंठें ग्रामीण अंचलों में लगती हैं।

ग्रामीण उपभोक्ता की पैंठों पर निर्भरता

महात्मा गांधी ने कहा था--"भारत गांवों का देश है और कृषि भारत की आत्मा है।" दीर्घकाल से भारत की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान रही है। हर पांच में से चार भारतीय गांवों में निवास करते हैं। कृषि व पशुपालन के अतिरिक्त लघु एवं कुटीर उद्योगों के माध्यम से अधिसंख्य ग्रामीण अपनी जीविका चलाते रहे हैं।

कृषि व कुटीर उद्योगों द्वारा उत्पादित उत्पादों को या तो कर्ज के भुगतान के बदले में साहूकार उत्पादक से सस्ते मूल्य पर खरीद लेते हैं या उत्पादकों द्वारा पूंजी तथा यातायात आदि साधनों के अभाव में थोड़ी-थोड़ी मात्रा में पैंठों में ही उनका विक्रय कर दिया जाता है। माप-तोल में गड़बड़, हिसाब में हेरा-फेरी, भुगतान प्राप्ति में कठिनाई, विविध प्रकार की कटौतियां आदि शोषण पूर्ण व्यवहारों के कारण कृषक मंडियों में उत्पादों का विक्रय करने से कतराते हैं। शाही कृषि आयोग के कथनानुसार "भारतीय मंडियों में प्रचलित कपटपूर्ण पद्धतियां किसी भी तरह खुली चोरी से कम नहीं हैं।" इसलिए भी भारत में ग्रामीण विपणन व्यवस्था के एक अंग के रूप में पैंठों का महत्वपूर्ण योगदान है या ग्रामीण कृषक बहुत कुछ सहकारी विपणन समितियों पर भरोसा करते हैं।

पैंठों का ढांचा

साधारणतया पैंठें खुले मैदान में निश्चित स्थान पर निश्चित दिन लगती हैं। अधिकांश दुकानें खुले चबूतरों पर या जमीन पर

लगती हैं। इनमें से कुछ विक्रेता तिरपाल या कपड़ा तान कर वर्षा, धूप, धूल तथा चोरी से बचने का अस्थायी उपाय कर लेते हैं। कुछ दुकानें कच्ची या पक्की दीवारों पर छत डालकर भी बनायी जाती हैं। कुछ पैंठों में लकड़ी के खोखे भी दुकानों के लिए प्रयोग में लाए जाते हैं। जिस गति से गांव, कस्बे और शहरों की ओर अग्रसर हो रहे हैं उसी गति से पैंठों का विकास कस्बों और शहरों में होता जा रहा है जिनमें पास के ग्रामीण क्षेत्रों के उपभोक्ता पर्याप्त संख्या में वस्तुएं खरीदने आते जाते हैं। एक पैंठ के साथ औसतन 4 से 12 किमी. अर्द्ध व्यास के क्षेत्र में आने वाले गांवों के उपभोक्ता वस्तुओं का क्रय-विक्रय करने की दृष्टि से संबद्ध रहते हैं। उ. प्र. में पैंठों में ग्राहकों की औसत संख्या 2,000 से 3,000 तक रहती है और विक्रेताओं की औसत संख्या 150 से 400 के बीच रहती है। बहुत से ग्रामीण अपने साथ थोड़ी मात्रा में अनाज इत्यादि पैंठों में बेचने के लिए लाते हैं और उनको बेचने के बाद आवश्यक वस्तुएं खरीद कर ले जाते हैं।

पैंठों में ग्रामीण उपभोक्ता व्यवसाय

पैंठों में विक्रेता न्यूनतम विनियोजन करके भी अच्छा-खासा लाभ कमा लेते हैं। इनका परिचालन व्यय कम होता है और मूल्य अनिश्चित होने के साथ-साथ बिक्री की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है। ग्रामीण उपभोक्ता की सौदेबाजी की प्रवृत्ति के कारण अन्त में विक्रेता को ही लाभ प्राप्त होता है। सामान्य ग्रामीण अपनी सौदेबाजी की प्रवृत्ति के कारण शहरों में बड़ी दुकानों पर जाने में भी संकोच करता है और पैंठों से ही अधिकांश खरीद करता है। शहर और कस्बे के पास के गांवों को छोड़कर अन्य ग्रामीण औसत रूप से अपनी कुल खरीद का 55 प्रतिशत पैंठों से 20 प्रतिशत गांव से तथा 25 प्रतिशत शहर तथा कस्बों से करते हैं। साक्षात्कार द्वारा ज्ञात हुआ कि अधिकांश ग्रामीण वस्तुएं खरीदने के लिए पैंठ के दिन की प्रतीक्षा करते हैं और तब तक के लिए खरीद को टाल देते हैं।

जिन क्षेत्रों में यातायात साधनों का पर्याप्त विकास हुआ है और गांव को कस्बों व शहरों से सड़क तथा रेल मार्ग द्वारा जोड़ दिया गया है ग्रामीण उपभोक्ता की पैंठों पर निर्भरता में कमी आयी है। किन्तु इसके साथ ही वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धता की दृष्टि से पैंठों का भी पर्याप्त विकास हुआ है। वर्षा काल में मार्ग अवरुद्ध हो जाने के कारण पैंठें सूनी हो जाती हैं। पूर्वी उ. प्र. की तुलना में पश्चिमी उ. प्र. में परिवहन साधनों की प्रचुरता व आर्थिक सम्पन्नता होने के कारण अधिसंख्य ग्रामीण उपभोक्ता व कस्बों और शहरों में आकर इच्छानुसार वस्तुएं खरीद कर ले जाते हैं। इस कारण पैंठों पर अपेक्षाकृत कम निर्भर रहते हैं।

व्यावहारिक अध्ययन

ग्रामीण उपभोक्ताओं की पैंठों पर निर्भरता का अध्ययन करने की दृष्टि से उ. प्र., में मऊ की पैंठ, छोटी पैंठ एवं बड़ी पैंठ (आंवला, जिला बरेली) तथा हापुड़ की पैंठ का व्यावहारिक अध्ययन किया गया। इसमें मऊ की पैंठ पूर्ण रूप से ग्रामीण क्षेत्र में, आंवले की पैंठ कस्बे में और हापुड़ की पैंठ शहरी क्षेत्र में आती है। कुछ उत्साही पढ़े-लिखे बेरोजगार नवयुवकों द्वारा काम की तलाश के परिणामस्वरूप हापुड़ की पैंठ वर्ष 1977 में प्रारम्भ हुई जो प्रत्येक रविवार को शहर के मध्य लगती है। इस दिन शेष बाजार बन्द रहता है। मऊ और आंवले की पैंठ अनिश्चित काल से निरन्तर लगती आ रही है। मऊ की पैंठ प्रत्येक बुधवार और शनिवार को, आंवले की बड़ी प्रत्येक सोमवार व बृहस्पतिवार को तथा छोटी पैंठ मंगलवार और शुक्रवार को लगती है। सर्वेक्षण के दौरान अनेक अन्य पैंठों का भी भ्रमण किया गया तथा क्रेताओं और विक्रेताओं से साक्षात्कार भी किया गया।

मऊ तथा आंवले की पैंठ ग्राहकों के वर्ग और क्षेत्र को छोड़कर व्यवसाय व रचना की दृष्टि से लगभग समान है। मऊ की पैंठ में लगभग 12 कि. मी. अर्द्धव्यास के ग्रामीण क्रेता तथा विक्रेता वस्तुओं और सेवाओं का क्रय-विक्रय करने के लिए आते हैं। जबकि कस्बे के मध्य लगने के कारण आंवले की पैंठों में 40 प्रतिशत क्रेता तथा 60 प्रतिशत विक्रेता कस्बे से और शेष 7-8 कि. मी. दूरी तक लगने वाले गांवों से आते हैं। इन पैंठों में कपड़ा, अनाज, फल-सब्जी, जनरल मर्चेन्डाइज, चूड़ी, किराना, मछली, परचून, चाट, मिठाई, मिट्टी के बर्तन आदि वस्तुओं तथा दर्जी, सुनार, नाई, मोची, लुहार, बढ़ई, आदि की सेवाओं के अतिरिक्त बड़ी संख्या में गाय, भैंस, बैल, भेड़, बकरी, आदि पशुओं का क्रय-विक्रय किया जाता है। मनोरंजन की दृष्टि से नट, मदारी, जादूगर भी अक्सर अपनी कला का प्रदर्शन करके पैसा कमाने आते हैं। इन पैंठों की विशेषता है कि अधिकांश ग्रामीण थोड़ी मात्रा में कृषि उत्पाद अथवा हस्तनिर्मित वस्तुएं बेचने के लिए लाते हैं और उसको बेचने के बाद आवश्यक वस्तुएं खरीद कर ले जाते हैं।

हापुड़ की पैंठ शहर के मध्य लगने के कारण इसमें 60 प्रतिशत निम्न और मध्यम वर्ग के शहरी उपभोक्ता तथा 40 प्रतिशत ग्रामीण उपभोक्ता वस्तुएं क्रय करने के उद्देश्य से आते हैं। इसमें अधिकांश विक्रेता गांव-गांव, गली-गली, फेरी करने वाले ही होते हैं। पैंठ के क्षेत्र में पड़ने वाले दुकानदार भी अपनी दुकान का आधा शटर खोलकर चबूतरे पर वस्तुएं लगाकर पैंठ के दिन अच्छी-खासी बिक्री कर लेते हैं। इस पैंठ में कपड़े और जनरल मर्चेण्डाइज की दुकानें ही मुख्य रूप से लगती हैं।

पैंठ वस्तुओं और सेवाओं के आधार पर विभिन्न विभागों में विभक्त रहती है। फल-सब्जी, मछली, अनाज, कपड़ा, पशु, जनरल मर्चेण्डाइज, परचून, किराना, नाई, मोची, सुनार, लुहार, बढ़ई आदि वस्तु तथा सेवा के लिए निश्चित स्थान पर ही अपनी दुकानें लगाते हैं। इन विभागों को वस्तु के बाजार के नाम से पुकारा जाता है। जैसे—सब्जी बाजार, मछली बाजार आदि।

सर्वेक्षण के आधार पर प्राप्त आंकड़ों से पैंठों पर ग्रामीण उप-भोक्ता की निर्भरता स्पष्ट होती है:—

पैंठ का नाम	सेवा क्षेत्र (अर्द्ध व्यास किमी०)	ग्राहकों की संख्या			विक्रेताओं की संख्या
		महिलाएं	पुरुष	ग्रामीण (प्रतिशत)	
मऊ की पैंठ . .	11—12	400—500	1800—2000	95%	300—350
छोटी पैंठ . .	8—9	300—400	2000—2200	60%	300—350
बड़ी पैंठ . .	7—8	300—400	1500—1800	60%	250—300
हापुड़ की पैंठ . .	6—7	1000—1200	500—700	40%	250—270

वितरण प्रणाली के प्रभावी क्रियान्वयन की आवश्यकता

जनसंख्या बढ़ने के कारण जीवन स्तर में गिरावट आना स्वाभाविक है। गत 10 वर्षों में जनसंख्या में लगभग 13 करोड़ 56 लाख अर्थात् 24.75 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 1981 की जनगणना के अनुसार देश की जनसंख्या लगभग 68 करोड़ 38 लाख है। गांव की प्रति व्यक्ति आय शहर की तुलना में बहुत कम है। वर्ष 1978 में शहर की प्रति व्यक्ति औसत आय 3,320 रुपये थी जबकि गांव की प्रति-व्यक्ति औसत आय मात्र 588 रुपये रही। सवा ग्यारह करोड़ जनसंख्या वाले राज्य उ. प्र. में आधी जनता गरीबी की सीमा रेखा के नीचे अमानवीय दशाओं में अपना जीवन यापन कर रही है। वर्ष 1979-80 में ग्रामीण क्षेत्र में 47.80 प्रतिशत अर्थात् 4 करोड़ 6 लाख 80 हजार और शहरी क्षेत्र में 43.53 प्रति-शत अर्थात् 68 लाख 55 हजार लोग इस रेखा से नीचे थे।

उक्त दशाओं में निम्न श्रेणी के उपभोक्ताओं को परिवार के भरण-पोषण के लिए घटिया वस्तुओं के प्रयोग पर निर्भर रहना पड़ता है। पैंठों में बढ़ती हुई भीड़ का निश्चय ही यह भी एक कारण है। धनाभाव की दशा में क्रेता और विक्रेता दोनों के लिए ये पैंठें संतोषप्रद बाजार हैं। फिर भी यदि निरपेक्ष दृष्टि से देखा जाए तो यहां भी उपभोक्ता का शोषण ही दिखाई देता है। इस शोषण से वह मूल्यों की भूल-भुलैयों के कारण सर्वथा अनभिज्ञ रहता है। आवश्यकता है उनको सस्ते मूल्य पर अच्छी वस्तुएं उपलब्ध कराने की, जो मिलावट रहित हों, नकली न हों तथा माप-तौल में पूरी हों।

ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं उपलब्ध कराने के उद्देश्य से सार्वजनिक वितरण प्रणाली को सैद्धान्तिक रूप से सक्षम बनाया गया है। व्यावहारिकता की कसौटी पर इसके अन्तर्गत प्रदत्त सुविधाएं "ऊंट के मुंह में जीरा" की कहावत चरितार्थ करती हैं। ग्रामीण उपभोक्ता को आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराने के लिए पैंठें सशक्त माध्यम हैं। "चल उपभोक्ता सहकारी भण्डारों" व अन्य सहकारी संस्थाओं द्वारा सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत ग्रामों के लिए नियन्त्रित तथा अनियन्त्रित वस्तुओं का उचित मूल्य पर वितरण करना अधिक कारगर सिद्ध होगा। इससे न केवल सार्वजनिक वितरण का उद्देश्य पूरा होगा बल्कि सहकारी आन्दोलन के व्यापक प्रचार-प्रसार के साथ-साथ सहकारिता के प्रति ग्रामीण जनता में एक विश्वास पैदा होगा और ग्रामीण उपभोक्ता को सौदाबाजी जैसी प्रवृत्तियों से छुटकारा दिला कर उनको स्थायी शोषण से मुक्त कराया जा सकता है। □

पोस्ट ग्रेजुएट डिपार्टमेंट आफ कामर्स
एस. एस. वी. कालिज
हापुड़ (उ. प्र.)

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम का लेखा-जोखा . . .

[पृष्ठ 12 का शेषांश]

एकीकरण व स्थायित्व तथा सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से भी न्यूनतम बुनियादी आवश्यकताओं की सम्पूर्ति होना जरूरी है। भारतीय अर्थव्यवस्था में असंतुलित विकास के लिए भी यह उत्तरदायी है कि देश के 50 प्रतिशत लोगों की बुनियादी आवश्यकताएं अतृप्त/अपूर्ण रहती हैं। यदि देश संविधान के नीति निर्देश सिद्धान्तों को अमल में लाने तथा समाजवादी समाज की स्थापना के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ है, तब पर्याप्त वित्तीय प्रावधान करके न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम समयबद्ध लक्ष्यों की प्राप्ति परम आवश्यक है। भारत, जहां विश्व का प्रत्येक छठवां व्यक्ति रहता है, दीर्घकालीन आधार पर ही समस्या से जूझकर समस्या से निपट सकता है और इस अभियान में गरीबों का सक्रिय सहयोग आपेक्षित होता है। □

बस्तर में प्रगति की नई पगडंडियां

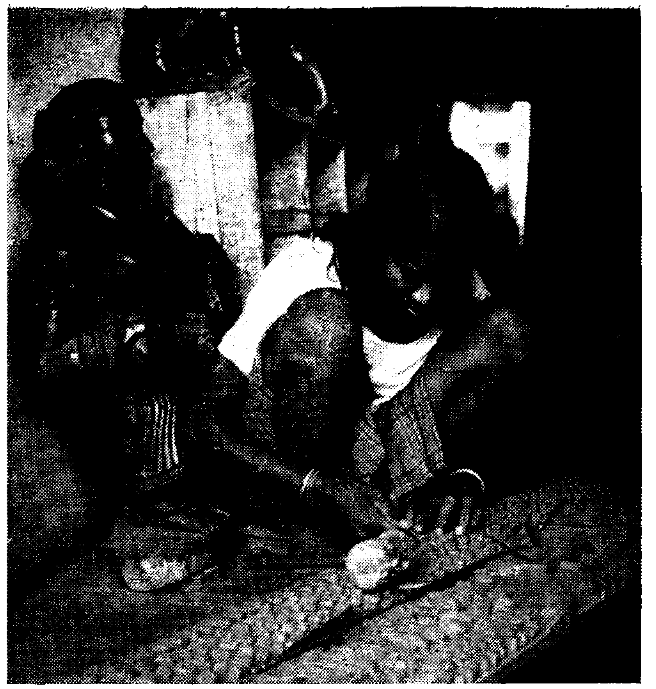

प्रशिक्षण केन्द्र, जगदलपुर में दस्तकारी का काम करते हुए

जगमोहन लाल माथुर

वहां नैसर्गिक सुषमा है, साल के लुभावने वन हैं, ऊंची पर्वत श्रृंखलाएं हैं पर इसका अर्थ यह नहीं है कि बस्तर उन्नत या सम्पन्न क्षेत्र है। यह मन को बेधने वाला तथ्य है कि यह सुरम्य भूमि देश के सबसे पिछड़े इलाकों में से है। बस्तर भारत का तीसरा सबसे बड़ा जिला है और मध्य प्रदेश का सबसे बड़ा जिला है। इसका कुल क्षेत्रफल 39,000 वर्ग किलोमीटर है जो हमारे केरल राज्य से भी अधिक है। इसकी जन-संख्या करीब साढ़े अठारह लाख है जिनमें अनुसूचित जनजातियों की संख्या लगभग 12 लाख 7 हजार है और कुल आबादी का करीब 65 प्रतिशत है। इस जिले में कुल मिलाकर 3680 से अधिक गांव हैं और कई गांव दूर-दूर बसे मोहल्लों में भी बंटे रहते हैं। इन्हें सात परियोजनाओं में बांटकर विकास का कार्य किया जा रहा है। अबूझमाड़ और पराल कोट अब भी सबसे पिछड़े इलाके हैं। 1972 में केन्द्रीय सरकार ने दक्षिण बस्तर की कोन्टा व दन्तेवाड़ा तहसीलों के लिए दो विशेष परियोजनाएं शुरू की थीं।

दक्षिणी बस्तर, उत्तरी भाग की अपेक्षा अधिक पिछड़ा हुआ है। दक्षिणी बस्तर में जगदलपुर, कोन्टा, बीजापुर व दन्तेवाड़ा तहसीलें गिनी जाती हैं जबकि उत्तरी बस्तर में कांकेर, नारायणपुर, भानुप्रतापपुर एवं कोन्टा गांव तहसीलें हैं। निकटतम रेलवे स्टेशन रायपुर से सड़क मार्ग द्वारा बस्तर जाते समय सबसे पहले प्रमुख नगर कांकेर ही पड़ता है। कांकेर रियासत तथा बस्तर रियासत को मिलाकर स्वतंत्रता के बाद बस्तर जिले का निर्माण किया गया था। हालांकि बस्तर में विकास का सिल-सिला 1960 के दशक से शुरू हुआ है पर पिछले दशक में ही ज्यादा जोरों से काम हुआ। पिछले चन्द वर्षों में बस्तर का रूप बदलने के लिए कई महत्वपूर्ण पग उठाए गए और कई योजनाओं को कार्यरूप दिया गया है। मेरे विचार में आदिवासियों की भलाई के लिए जो सबसे महत्वपूर्ण काम हुआ है, वह है सेवा सहकारी दुकानों का विस्तार। भोले-भाले आदिवासियों को अपनी छोटी-छोटी जरूरत की चीजें दुका-नदारों से खरीदनी होती थीं और वे उनसे मनमाने दाम लेते थे। अक्सर आदिवासी फसल के बाद फटेहाल हो जाते हैं और दुकानदारों से चीजें उधार लेने के लिए मजबूर रहते हैं। इस स्थिति को सुधारने में सहकारी समितियों का विस्तार काफी सहायक रहा है। इन दुकानों के सामने नाम-पट्ट के अलावा नीला झंडा भी लगा होता है ताकि अपढ़ आदिवासी भी पहचान लें कि यह वह दुकान है जहां से वह नमक, चावल, तेल, साबुन, माचिस, कपड़ा आदि वाजिब दाम पर ले सकता है। एक अच्छी व्यवस्था यह हुई कि इन्हें विपणन समितियों से जोड़ दिया गया है। बस्तर के कलेक्टर श्री मिश्र के अनुसार इन समितियों की यह सीधी जिम्मेदारी है कि दुकानों पर आवश्यक चीजें निरन्तर पहुंचती रहें। आंतरिक इलाकों की दुकानों पर माल पहुंचाने के लिए परिवहन सहायता दी जाती है जिससे वहां भी उसी भाव पर चीजें उपलब्ध हों जिस भाव पर सड़क के किनारे की दुकानों पर मिलती हैं। दही-कोंगा और गीदम में मैंने ऐसी दुकानों से आम जरूरत की चीजें खरीदते हुए आदि-वासियों को देखा। गीदम समिति के 676 सदस्य हैं और साप्ताहिक हाट के दिन तो

लम्बी कतार लगी रहती है। इन सहकारी समितियों को आदिवासियों को 200 रु. तक की चीजें उधार देने का भी अधिकार है और 50 रु. नकद भी उधार मिल सकता है।

बस्तर जिले का एक दुर्भाग्य यह रहा कि यहां साहूकारों ने भोले-भाले आदिवासियों का बेहद शोषण किया। इन्हें ऋण सम्बन्धी सुविधाएं देने के लिए भारतीय स्टेट बैंक और अन्य राष्ट्रीयकृत बैंकों ने काफी कार्य किया है। इस समय जिले में भारतीय स्टेट बैंक के 30 कार्यालय हैं। अन्य व्यावसायिक बैंकों के 15, सहकारी बैंकों के 23 तथा ग्रामीण बैंक की 30 शाखाएं भी काम कर रही हैं। आदिवासियों को बैंक जैसे संस्थाओं से ऋण के लिए राजी करना भी एक विकट काम था। इन बैंकों ने सात योजना बनाकर योजनाबद्ध तरीके से काम किया। 31 दिसंबर, 1979 तक इस क्षेत्र के सभी बैंकों ने मिलकर 718.63 लाख रु. का ऋण वितरित किया जिसमें अकेले भारतीय स्टेट बैंक का योगदान 2 करोड़ रुपये का था। भारतीय स्टेट बैंक ने 2 अक्तूबर, 1979 तक कृषि के लिए 3800 से अधिक, लघु उद्योगों के लिए 1000 से अधिक, छोटे-मोटे कारोबार के लिए 1850 लोगों को ऋण दिया। एक संतोषजनक प्रावधान यह है कि अब आदिवासी अपना जेवर गिरवी रखकर स्टेट बैंक से ऋण ले सकते हैं। पहले वे जेवर गिरवी रखकर साहूकार से ऋण लेते थे और साहूकार ब्याज के रूप में न केवल उनका जेवर हजम कर जाता था बल्कि अधिकांश फसल भी ले लेता था। स्टेट बैंक की दन्तेवाड़ा शाखा से लगभग 100 आदिवासियों ने जेवर गिरवी रखकर ऋण लेने की सुविधा प्राप्त की है। पर बैंकों में लिखा-पढ़ी को आदिवासी एक बेकार का झन्झट मानते हैं और साहूकार से ऋण उन्हें आसानी से मिल जाता है। वर्षों से कर्जों के बोझ में दबे आदिवासियों को मुक्ति दिलाने के लिए मध्य प्रदेश सरकार ने कई कानून बनाए हैं। पर साहूकार आदिवासियों को अपने चंगुल में फंसाए रखने के लिए कोई न कोई तरीका ढूंढ निकालते हैं।

रहने के मकान

बस्तर जिले में एक अन्य अच्छा काम आदिवासियों के लिए आवास सुविधाओं के क्षेत्र में हुआ है। आदिवासियों के लिए मकान बनाने के लिए सरकार ज़मीन मुफ्त अलाट करती है और 500 रु. की नकद सहायता तथा कुछ बांस और बल्लियां आदि दिए जाते हैं। झोंपड़ा तैयार करने का काम आदिवासी के परिवार के लोग मिलकर करते हैं। यह व्यवस्था काफी अच्छी रही है और मैंने इस ढंग से बनाए गए मकान कांकेर से जगदलपुर और नारायणपुर की अंतागढ़ के मार्ग पर काफी संख्या में

बस्तर जिले के प्रायः सभी गांवों में हाथ नलकों (हैण्ड पम्प) से ही स्वच्छ पेय जल की पूर्ति

देखे। आदिवासियों ने इस व्यवस्था को काफी पसंद किया। 1981 की पहली छमाही में जिले के विभिन्न गांवों में करीब 6400 मकान इस ढंग से बनाए गए हैं। जमीन देते समय यह भी ध्यान रखा गया है कि आदिवासियों के लिए न केवल रहने के लिए मकान बन जाएं बल्कि पास ही थोड़ी खुली जगह जरूर हो जहां वे सब्जी उगा सकें या पशुओं को बांध सकें क्योंकि इस तरह की व्यवस्था के बिना आदिवासी इन मकानों में रहने के लिए कदापि तैयार नहीं होंगे भले ही ये मकान कितने ही सुन्दर क्यों न बनें।

शिक्षा के प्रसार की दिशा में भी बस्तर में काफी काम हुआ है। ऐसी व्यवस्था की गयी है कि 300 या उससे अधिक आबादी वाले प्रत्येक गांव में कम से कम एक प्राइमरी स्कूल हो। इस प्रकार जिले में 3200 प्राइमरी स्कूल खोले गए हैं। इनके अलावा, 497 माध्यमिक और 61 उच्चतर माध्यमिक स्कूल भी काम कर रहे हैं। इन सबका प्रबंध आदिवासी कल्याण विभाग के जिम्मे है। जिले के प्राइमरी स्कूलों में आजकल लगभग 50,000 लड़के और 20,000 लड़कियां शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। इस प्रकार माध्यमिक स्कूलों में शिक्षारत छात्रों की संख्या 9,000 और छात्राओं की संख्या 2,000 है। यहां आश्रमशालाएं भी काफी प्रसिद्ध हुई हैं क्योंकि इनमें न केवल मुफ्त शिक्षा दी जाती है वरन् रहने और खाने का मुफ्त प्रबंध होता है। आदिवासी मां-बाप अपने बच्चों को इन स्कूलों में भेजकर चिन्ता मुक्त हो जाते हैं अन्यथा वे यह अपेक्षा करते हैं कि लड़के-लड़कियां उनके काम में हाथ बटाएं। आदिवासी कल्याण विभाग ने 170 होस्टल भी बनाए हैं जिनमें से 11 होस्टल केवल लड़कियों के लिए हैं।

प्रशिक्षण सुविधाएं

ग्रामीण स्व-रोजगार योजना और अन्य प्रशिक्षण सुविधाएं रोजगार के अवसर बढ़ाने में सहायक रही हैं। बस्तर नामक गांव के पास औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था में लगभग 300 लड़कों ने फिटर इलेक्ट्रीशियन, मोटर मैकेनिक आदि ट्रेडों का प्रशिक्षण प्राप्त किया है पर इन लड़कों में कुछ बस्तर से बाहर के भी हैं। बस्तर में प्रशिक्षण प्राप्त करके अपना काम-धन्धा शुरू करने में दर्जी का काम सबसे अधिक लोकप्रिय हुआ है। कांकेर प्रशिक्षण केन्द्र में लगभग 100 लड़के-लड़कियां अब तक सिलाई का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं। ट्राइसेम योजना के अंतर्गत टेलर मास्टरों से भी प्रशिक्षण दिलाया जा रहा है। इस तरह कुछ आदिवासी लड़कों से मैंने दहीकोंगा में बातचीत की जो एक टेलर मास्टर से सिलाई सीख रहे हैं। उन्होंने बताया कि सिलाई सीखकर जब वे अपनी सिलाई मशीन खरीद लेंगे तो साप्ताहिक बाजार के दिनों पर वे गांव-गांव जाकर सिलाई का काम करेंगे और इससे वे लगभग 5–6 रु. रोज कमा लेंगे। नारायणपुर और दन्तेवाडा गांवों में बढ़ईगिरी और टाट-पट्टियां बनाने का भी प्रशिक्षण दिया जा रहा है लेकिन जिस काम ने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया है वह कांकेर के पास बेवरती गांव में निवाड़ बुनाई का प्रशिक्षण। यहां करीब 15 स्त्रियों ने निवाड़ की बुनाई सीखने के बाद अपने ही घर में छोटे करघे लगा लिए हैं और वे निवाड़ की बुनाई करके 6-7 रु. रोज कमाने लगी हैं। तैयार निवाड़ को बेचने की सुविधा भी उसी गांव में है क्योंकि एक विपणन सहकारी समिति यह काम करती है।

जगदलपुर में कोसा बुनाई केन्द्र का योगदान भी कम नहीं है जहां प्राकृतिक रूप से उपलब्ध कोसा फल से रेशा निकालने का काम बड़े अच्छे ढंग से किया जा रहा है और रेशमी वस्त्र बुने जाते हैं। पहले आदिवासी स्त्रियां उबले हुए कोसा को जांघ से रगड़कर इससे रेशा निकालती थीं पर अब यह काम साधारण उपकरण द्वारा किया जा रहा है जिसे वह स्वयं चला सकती हैं। आजकल 15 आदिवासी महिलाएं कोसा केन्द्र में यह प्रशिक्षण ले रही हैं। रेशा निकालने के अलावा आदिवासी युवक बुनाई के काम में भी रुचि लेने लगे हैं। मैं इसी तरह के एक लड़के दया राम से मिला जो मिल्क के करघे पर बुनाई करने में निपुण हो गया है। जगदलपुर में ही एक ऐसा केन्द्र भी है जहां आदिवासी लड़के, लकड़ी और पत्थर पर नक्काशी तथा मूर्ति बनाने की कला सीख रहे हैं। इनमें से कुछ किशोर अखिल भारतीय प्रतियोगिता में भाग लेने को तैयार हैं। जिला औद्योगिक केन्द्र के अधिकारियों का दावा है कि जिले में 500 आदिवासी बच्चों को प्रशिक्षण के बाद बैंक से ऋण दिलाकर काम धन्धा शुरू करवाया है।

देश के अन्य पिछड़े इलाकों की तरह बस्तर में भी एक अन्य मुख्य समस्या पीने के पानी की थी। जिले के कुल 3382 आबाद गांवों में से 2442 गांवों को समस्यामूलक गांव माना गया जिनमें से लगभग 2000 गांव में पीने के पानी की व्यवस्था कर दी गई है। अधिकांश गांवों में लोगों को हैण्डपम्पों से पानी लेते हुए देखा जा सकता है। करीब एक दर्जन गांवों में नल भी लगे हैं। पिछले 3–4 साल में हैण्डपम्प लगाने का काम बड़ी तेजी से हुआ है। इस अवधि में करीब 1300 गांव लाभान्वित हुए हैं।

पर ग्रामीण विद्युतीकरण के क्षेत्र में प्रगति तेज नहीं है। 30-9-81 तक जिले के केवल 464 गांवों में बिजली पहुंचायी गयी थी। सड़क बनाने की दिशा में भी प्रगति हो रही है। कांकेर से जगदलपुर और जगदलपुर से बैलाडिया तक बहुत अच्छी सड़क है और यही बात जगदलपुर से नारायणपुर तक जाने वाली सड़क के बारे में कही जा सकती है पर आन्तरिक क्षेत्र में अभी सड़कें कम हैं अबूझमांड में छोटा डूंगर से अधिक दूर जाने के लिए अच्छी सड़क नहीं है जबकि ओरछा आदि तक अच्छी सड़क का होना आवश्यक है क्योंकि इस क्षेत्र में प्रगति की रफ्तार अभी तक बहुत धीमी है। इस इलाके में आदिवासी विभाग नमक और स्त्रियों के लिए साड़ियां मुफ्त वितरित करता रहा है। नमक यहां के लोगों की सबसे अधिक जरूरत की वस्तु है और साड़ियों के मुफ्त वितरण के कारण सभी आदिवासी स्त्रियां अब पूरी तरह कपड़े पहनने लगी हैं।

इस प्रकार बस्तर धीरे-धीरे पिछड़ेपन के अंधेरे से निकल कर प्रगति के पथ पर बढ़ने के लिए प्रयास कर रहा है। □

सहकारी शिक्षण बदलते परिवेश में

*

यशवन्त सिंह बिसेन

सहकारी शिक्षण प्रभावशाली नहीं है; राज्य सहकारी संघ की महत्वपूर्ण योजनाएं राशि की कमी के कारण वर्ष में 4-5 महीने बन्द रहती हैं, जिला सहकारी संघ के कार्यों का पता नहीं चलता कि ये संघ किस मर्ज की दवा हैं? आदि आदि। इन शब्दों में पिछले अखिल भारतीय सहकारी सप्ताह के सहकारी शिक्षा दिवस के अवसर पर एक सज्जन मंच पर खड़े-खड़े सहकारी शिक्षा की आलोचना जोरदार शब्दों में किए जा रहे थे। ऐसे तो किसी भी वस्तु या कार्य की आलोचना करना अत्यन्त ही सरल है, आलोचना करने में इतने दिमाग या बुद्धि की आवश्यकता नहीं होती है जितनी कि किसी कार्य को बनाने या सुधारने में बुद्धि एवं ज्ञान की आवश्यकता होती है। आलोचनाओं पर विचार करने के पूर्व यह जान लेना अत्यन्त आवश्यक है कि भारतवर्ष एवं मध्यप्रदेश में सहकारी शिक्षा की क्या व्यवस्था रही।

ऐसे तो अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी परिसंघ द्वारा "सहकारी शिक्षा" एक मान्यता प्राप्त सहकारी सिद्धांत है। इसलिए भारतीय सहकारी आन्दोलन में सहकारी शिक्षा पर कुछ-कुछ कार्य किए गए हैं किन्तु वे कार्य सुसंगठित नहीं थे क्योंकि उस समय यह आंदोलन पूरी तरह अंग्रेजी शासन के अधीन था तथा जो भी व्यवस्था अंग्रेजी शासन ने की बस वहीं तक सीमित रही। दूसरी एक बात और थी कि अधिकांश भारतीयों ने सहकारी शिक्षा, सहकारी सम्मेलन, सहकारी परिसंवाद आदि को उतना महत्व नहीं दिया जितना कि दिया जाना चाहिए था क्योंकि सम्मेलन परिसंवाद, प्रदर्शनी, सहकारी शिक्षा आदि पर व्यय को एक अनावश्यक व्यय मानते थे, वे समझते थे कि सम्मेलन परिसंवाद से कोई फायदा नहीं है, मात्र फिजूलखर्ची ही है।

सहकारी शिक्षा के संबंध में अमेरिकन कोआपरेटिव टेक्नीकल मिशन (अमेरिकन अम्बेसी) के डा. हेक्मेन ने सन् 1959 में अपने सुझाव रखते हुए कहा था कि भारतवर्ष में सुचारू रूप से सहकारी शिक्षा सन् 1904 से ही प्रारम्भ हो जानी चाहिए थी जब से कि सहकारी आंदोलन की शुरूआत कानूनी रूप में अंग्रेजी शासन द्वारा की गई थी, परन्तु भारतवर्ष में सुचारू रूप से सहकारी शिक्षा की शुरूआत सन् 1957 से प्रारम्भ हुई, जबकि अमेरिका आदि में कोई भी नई योजना प्रारम्भ करने के पूर्व ही भरपूर प्रचार तथा उसके सम्बन्ध में शिक्षा की व्यवस्था की जाती है जिससे योजना प्रारम्भ होते ही उसको जन साधारण का सहयोग मिलने लगे तथा योजना शीघ्र सफल हो परन्तु भारतवर्ष में इस दिशा में कोई भी प्रचार प्रारम्भ में नहीं किए जाते रहे। इस कारण अधिकांश योजनाओं को जनसहयोग प्राप्त नहीं होता तथा ये योजनाएं असफल हो जाती हैं।

सन् 1957 के पूर्व भारतवर्ष में किन्हीं प्रांतों में सहकारी शिक्षा मैजिक लेटर्न के माध्यम से सहकारी विभाग या सहकारी बैंक द्वारा संचालित की जाती थीं एवं मेलों आदि में रैली आदि का आयोजन कर सहकारी आंदोलन का प्रचार किया जाता था जिसका प्रभाव नगण्य ही रहता था। मध्यप्रदेश में महाकौशल क्षेत्र में प्रत्येक जिला सहकारी बैंक में एक सहकारी शिक्षा और निरीक्षण समिति रहा करती थी जो जिले में सहकारी आंदोलन के प्रचार एवं समितियों के पर्यवेक्षण का ही कार्य करती थी। मध्यप्रदेश में सन् 1957 में जब सहकारी शिक्षा का प्रारंभ सुचारू रूप से प्रारम्भ किया गया, उस समय महाकौशल क्षेत्र में राज्य सहकारी संघ द्वारा प्रत्येक जिले में नियुक्त जिला सहकारी प्रशिक्षकों को भी जिला सहकारी बैंक की इसी सहकारी शिक्षा और निरीक्षण समिति के अन्तर्गत रखा गया था। प्रशिक्षकों के कार्यों का पर्यवेक्षण जिला सहकारी बैंक में यही समिति करती थी। परन्तु सन् 1961 में जिला सहकारी संघों की स्थापना के पश्चात् महाकौशल के जिला सहकारी बैंकों की इन सुपरवीजन एवं एजूकेशन कमेटियों को भंग कर दिया गया।

सहकारी शिक्षा की पूर्व की व्यवस्था की जानकारी के पश्चात् पुनः आलोचनाओं की पंक्तियों की ओर ध्यान जाता है जो कि प्रारम्भ में अंकित हैं। वास्तव में जो भी आलोचना सहकारी शिक्षकों की की गई वह कुछ हद तक सही है तथा सहकारी शिक्षा के प्रभावशाली न होने के कुछ कारण ऐसे

हैं, जिन पर मध्यप्रदेश राज्य सहकारी संघ का वश नहीं है। जैसेः—

मध्य प्रदेश राज्य सहकारी संघ की आर्थिक दशा प्रारम्भ से डांवाडोल रही है, क्योंकि राज्य सहकारी संघ अपने उपनियम एवं सहकारी विधान के अनुसार आय के लिए राज्य की सहकारी संस्थाओं द्वारा प्राप्त होने वाले अंशदान एवं शासकीय अनुदान पर ही निर्भर है। संघ के ये दोनों साधन सीमित हैं तथा समय पर प्राप्त भी नहीं होते इसके अलावा इस अंशदान को साधारण बोलचाल में "चंदा" कहा जाता है। इसलिए अनेक सहकारी संस्थाओं के पदाधिकारी यह सोचकर भी समय पर अंशदान आदि नहीं देते कि वे इसे धार्मिक स्थल मंदिर आदि के चन्दे के समान समझते हैं जिसे देना या न देना जनता जनार्दन की इच्छा पर है। बहुतों को यह भी मालूम है कि यदि संघ को अंशदान न भी दिया तो राज्य संघ जल्दी वसूल नहीं करवा सकता है। इसकी वसूली की कार्यवाही में बहुत समय लग जाता है। पर्याप्त राशि समय पर प्राप्त न होने के कारण राज्य संघ द्वारा संचालित योजनाएं चलते-चलते रुक जाती हैं। यही कारण है कि सर्वप्रथम राशि के अभाव के कारण सन् 1962 में बिना स्टाइपेन्ड के कक्षाएं आयोजित करने के निर्देश दिए गए थे। ऐसा अधिकांश तौर पर होता ही रहता है। कक्षाओं के लिए धन की अनापशनाप इतनी कटौती कर दी गई कि वे कक्षाओं से सम्बन्धित सामान भी बैलगाड़ी आदि से नहीं ले जा सकते हैं, क्योंकि किराया अधिक लगता है। अर्थाभाव के कारण, शिक्षा उपकरण न होने के कारण सहकारी प्रशिक्षक केवल भाषण देने कक्षास्थल पर पहुंच जाते हैं तथा यह सही है कि बिना शिक्षण उपकरण के भाषण प्रभावशाली रहता भी नहीं। सदस्य भी पर्याप्त मात्रा में बड़ी मुश्किल से इकट्ठे होते हैं। व्यक्तियों के इकट्ठे होने के लिए ऐसे उपकरण की आवश्यकता होती है जो कि जनता जनार्दन को आकर्षित कर सके। इसी प्रकार शासकीय अनुदान की राशि वर्ष 1968-69 में 10 माह तक प्राप्त न होने के कारण संपूर्ण राज्य में सहकारी शिक्षा कार्यक्रम प्रायः बन्द रहा, शासकीय अनुदान जब दस माह बाद प्राप्त हुआ उसे इकट्ठा वेतन के रूप में बांट दिया गया। इसी प्रकार हर वर्ष 2-2, 3-3 माह राशि के अभाव में शिक्षा योजना प्रायः बन्द रहती हैं, जब इकट्ठी राशि प्राप्त होती है, तो वेतन के रूप में राशि वितरित हो जाती है। राशि के अभाव में सहकारी शिक्षा योजना ही नहीं, कोई भी योजना सफल नहीं हो सकती। आलोचना का सही एक बड़ा कारण है कि सन् 1958 से चल रही सहकारी शिक्षा योजना पूर्णतः सफल नहीं हो सकी है और यदि इसकी दशा भविष्य में भी यही रही तो यह योजना इसी प्रकार चलती रहेगी जिस प्रकार अब चल रही है और इसकी आलोचनायें हमेशा होती रहेंगी तथा जो भी अपर्याप्त राशि इस योजना को प्राप्त होती है उसमें संपूर्ण कार्य न होने के कारण राशि का उपयोग सही ढंग से नहीं हो पाता, केवल कर्मचारियों के वेतन देने में ही सम्पूर्ण धन समाप्त हो जाती है।

आर्थिक अभाव का प्रभाव इस योजना में कार्यरत कर्मचारियों पर भी अधिक पड़ता है। कोई भी योजना या संस्था का कार्य कर्मचारियों द्वारा ही किया जाता है। यदि कर्मचारीगण अपने कार्य के प्रति उदासीन रहें तो कोई भी योजना सफल नहीं हो सकती है। उनमें हताश होने की भावना आ ही जाती है।

कर्मचारीगण भी संस्था रूपी गाड़ी के चक्के के समान हैं यदि गाड़ी का एक चक्का जाम रहे तो गाड़ी को खींचने में अधिक श्रम लगता है। गाड़ी घिसटती है, चलती नहीं तथा जो गाड़ी घिसटेगी वह अपने गंतव्य स्थान पर नहीं पहुंच सकती है। बस यही हाल राज्य संघ के कर्मचारियों का है; उदासीनता का कारण यह है कि संघ की सेवा शर्तें अच्छी नहीं हैं, बड़ी मुश्किलों से तो संघ के कर्मचारियों का वेतन संशोधित हुआ वह भी पूर्ण रूपेण नहीं हुआ। इसी प्रकार अभी भी बाबा आदम के जमाने के यात्रा भत्ता नियम चल रहे हैं। अन्य महत्वपूर्ण सुविधाओं के न होने के कारण उदासीनता प्रायः कार्य के प्रति छाई रहती है। इसमें जो भी कर्मचारी शुरू-शुरू में नए नियुक्त होते हैं या तो वे हमेशा दूसरी नौकरी की तलाश में लगे रहते हैं या चार पांच माह कार्य करने के पश्चात् उनमें हताश होने की भावना आ ही जाती है, जिसका प्रभाव उनके कार्यों पर पड़ता है। जो भी नई-नई नियुक्तियां हुई हैं उनसे कोई लाभ नहीं होता क्योंकि जब वे स्वयं की तुलना दूसरी संस्थाओं के कर्मचारियों से सुविधाओं के सम्बन्ध में करते हैं तब वे अधिक उदासीन हो जाते हैं। उनको इससे मतलब नहीं है कि यह संस्था चंदे, अनुदान पर चल रही है तथा अन्य संस्थाएं व्यापारिक संस्थाएं हैं, उनकी स्वयं की पूंजी है, वे स्वयं आलोचना करते हैं कि खैराती संस्था का कार्य भी खैराती है।

इसी प्रकार राज्य संघ आर्थिक अभाव के कारण अपने प्रशिक्षकों को पर्याप्त प्रशिक्षण नहीं दे पाता, उन्हें मार्केटिंग उपभोक्ता, उद्योग स्टोरेज, आदि सहकारी समितियों के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त नहीं होता। जो कुछ भी ज्ञान वे प्राप्त करते हैं वह उनके स्वयं के प्रयास पर निर्भर करता है। जब प्रशिक्षक पूर्णतः ट्रेन्ड न हो तो वह किस प्रकार की ट्रेनिंग देगा। उसे कृषि के संबंध में भी ज्ञान नहीं, अधकचरा ज्ञानी अधकचरा ही ज्ञान प्रदान करेगा जिसका प्रभाव उल्टा ही पड़ता है तथा जो प्रभावशाली नहीं होता।

सहकारी शिक्षा की आलोचना होने का एक कारण यह भी है कि मध्य प्रदेश के ग्राम स्तर पर सहकारी शिक्षा क्षेत्रीय भाषा जैसे-मालवी, बुंदेलखंडी, बघेलखंडी, गोंड़ी, छत्तीसगढ़ी आदि भाषाओं में नहीं दी जाती। शुद्ध हिन्दी में ग्राम-स्तर पर भाषण देने से शिक्षा का प्रभाव अधिक नहीं पड़ता क्योंकि ग्राम्य समिति के सदस्य अधिकांश अधेड़ या बूढ़े ही होते हैं जो क्षेत्रीय भाषाएं ही अच्छी तरह समझ सकते हैं। ऐसे प्रशिक्षक की नियुक्ति करना, जो उस क्षेत्र की क्षेत्रीय भाषा नहीं जानता हो उसके शिक्षण देने का प्रभाव नहीं पड़ता।

इसी प्रकार जिला सहकारी संघ जिस उद्देश्य से सन् 1961 में प्रत्येक जिले में गठित किए गए थे वे अपने निर्धारित कार्य-क्रम के आधार पर कार्य नहीं कर रहे हैं। 1978-79 वर्ष में जिला संघों के लेखों

को देखने से विदित हुआ था कि वे अपनी कुल आय का केवल 6 प्रतिशत ही सहकारी शिक्षा पर व्यय करते हैं, शेष 94 प्रतिशत अन्य कार्यों पर व्यय करते हैं, जिनका प्रभाव सहकारी शिक्षा पर पड़ता ही नहीं है।

अब प्रश्न उठता है कि क्या मध्य प्रदेश राज्य सहकारी संघ आर्थिक दृष्टि से समृद्ध बन सकता है? यदि यह संस्था आर्थिक दृष्टि से समृद्ध नहीं हुई तो इसके द्वारा संचालित सभी योजनाएं कभी भी पूर्ण रूपेण सफली-भूत नहीं हो सकेंगी तथा जो भी राशि योजनाओं पर व्यय की जा रही है, उसका पूरा-पूरा लाभ जन साधारण को नहीं मिल पा रहा है। अर्थभाव के कारण ही राज्य संघ की प्रिंटिंग प्रेस आदि की योजनाएं केवल कागजों ही में बनकर रह गई हैं। उन्हें मूर्तरूप नहीं दिया जा सका।

वैसे देखा जाए तो सहकारी शिक्षण योजना से मध्य प्रदेश शासन एवं सहकारी संस्थाओं का प्रतिवर्ष लगभग सत्तर लाख रुपये एकत्रित होता है तथा व्यय होता है जिसका विवरण मोटे रूप से निम्नानुसार है:——समस्त जिला सहकारी संघों को जिला स्तर सहकारी संस्थाओं से प्राप्त होने वाला धन लगभग 40 लाख, राज्य सहकारी संघ को प्राप्त होने वाला अंशदान 10 लाख तथा राज्य सहकारी संघ को ही शासकीय अनुदान 22 लाख रुपये प्रतिवर्ष प्राप्त होता है। सहकारी शिक्षा पर केवल राज्य सहकारी संघ द्वारा ही शत प्रतिशत राशि का व्यय होता है। सहकारी शिक्षा प्रचार-प्रसार हेतु प्रतिवर्ष 70 लाख रुपये प्राप्त होने पर भी इन योजनाओं पर पूरी-पूरी राशि जिला सहकारी संघों द्वारा व्यय नहीं की जाती। यही कारण है कि सहकारी शिक्षण की योजना सफलीभूत नहीं हो रही है तथा प्रारम्भ से ही राज्य सहकारी संघ एवं जिला सहकारी संघों की आलोचना होती आई है कि "यहां कोई काम नहीं करता" तथा इन्हीं कारणों से वर्ष 1978-79 में राज्य शासन एवं सहकारिता विभाग ने जिला सहकारी संघों को समाप्त कर जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों में सम्मिलित करने की और प्रत्येक जिले में शिक्षण विंग (कक्ष) बनाने की योजना बनायी थी जिसका संचालन राज्य सहकारी बैंक द्वारा कराने की योजना थी क्योंकि राज्य शासन को पूर्ण अधिकार है कि वह सहकारी शिक्षण योजना को किसी भी संस्था के माध्यम से संचालित करा सकता है या स्वयं सहकारिता विभाग के अन्तर्गत शिक्षण कक्ष की स्थापना कर सहकारी शिक्षण का संचालन कर सकता है। यही कारण है कि कुछ सहकारी शीर्ष संस्थाएं सहकारी शिक्षण प्रशिक्षण, प्रचार-प्रसार, का कार्य स्वयं कर रही हैं, जिस प्रकार कि प्रत्येक व्यापारिक बैंक अपने कर्मचारियों के शिक्षण की व्यवस्था स्वयं करता है। परन्तु सहकारी आंदोलन में कर्मचारियों के शिक्षण के साथ-साथ साधारण सदस्यों को सहकारिता का ज्ञान देना अत्यंत आवश्यक होता है।

जहां तक जिला सहकारी संघों के कार्य संचालन का प्रश्न है, इन संघों का गठन इसी उद्देश्य से किया गया था कि वे सहकारी शिक्षण के क्षेत्र में मदद करेंगे, शिक्षण कक्षा आयोजित करने में कक्षा स्थल का चयन, कक्षा सबंधी सूचना एवं प्रचार जिला सहकारी संघ ही करेगा। प्रशिक्षकों के वेतन की व्यवस्था, उनको कार्यालय में बैठने के स्थान की व्यवस्था, स्टेशनरी, विशेष कक्षाओं में व्यय की व्यवस्था, जिला सहकारी संघ करेगा परन्तु व्यवहार में देखा गया कि इने-गिने दो-चार जिला सहकारी संघों को छोड़कर शेष जिला सहकारी संघ इस कार्य में निष्क्रिय रहे। इसका प्रभाव सहकारी शिक्षण योजना पर पड़ा। जिला सहकारी संघों के पास भी कार्य संचालन हेतु पर्याप्त राशि का अभाव रहता है। हालांकि इन्दौर जिला सहकारी संघ के समान एक-दो जिला सहकारी संघ शिक्षण योजना को संचालित करने हेतु सहकारी प्रशिक्षण की नियुक्ति करने की योजना बनाए हुए हैं परन्तु उनकी ये योजनाएं कागजों तक ही सीमित रही हैं।

सन् 1978-79 में एक यह भी योजना विचाराधीन थी कि जिला सहकारी संघों को राज्य सहकारी संघ में सम्मिलित कर एकात्मक संघ बनाया जाए जिससे कि समस्त अंशदान की राशि जो जिला सहकारी संघों को प्राप्त होती है, वह राज्य सहकारी संघ को इकट्ठी मिले जिससे संघ की स्थिति सुदृढ़ हो सके। परन्तु इस योजना का भी क्रियान्वयन नहीं हो सका क्योंकि उन जिला संघों ने इसका अधिक विरोध किया जिनके कर्मचारियों को अधिक वेतन के साथ-साथ सभी सुविधाएं प्राप्त हो रही थीं। भले ही कार्य कुछ न हो अंशदान केवल वेतन में वितरित करना ही इनका एक बहुत बड़ा भाग मुख्य ध्येय रहा है।

सहकारी शिक्षण योजना को सुचारू रूप से संचालित करने हेतु राज्य सहकारी संघ को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनाने का एक तरीका यह भी है कि वर्तमान में जिला सहकारी संघों को प्राप्त होने वाली आय जो धारा 47 के अन्तर्गत 90% जिला संघों को तथा शेष 10% राज्य सहकारी संघ को प्राप्त होती है, उसका जिला सहकारी संघों को 25% तथा राज्य सहकारी संघ को 75% प्राप्त होने का प्रावधान किया जाए तो ऐसी स्थिति में संघ आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हो सकता है।

अंत में कह सकते हैं कि राज्य में सहकारी शिक्षण के संचालन हेतु राज्य सहकारी संघ को सुदृढ़ करना ही होगा। यदि राज्य सहकारी संघ आर्थिक दृष्टि से समृद्ध नहीं होगा तो उसके द्वारा संचालित योजनाएं भी डांवाडोल हमेशा ही रहेंगी। अतः इस महत्वपूर्ण सहकारी शिक्षण योजना के संचालन के संबंध में गंभीरता पूर्वक विचार करना अत्यंत आवश्यक होगा क्योंकि शिक्षण योजना की आवश्यकता सहकारी आंदोलन के प्रत्येक क्षेत्र को है। इसके बिना शिक्षण योजना सफल नहीं हो सकेगी। योजना के महत्व की तुलना एक दीपक से करके कह सकते हैं कि दीपक में जितना तेल होगा उतनी ही गति से दीपक जलेगा अन्यथा बुझ जाएगा।

व्याख्याता,

सहकारी प्रशिक्षण केन्द्र,
27, खोली चौक
बिलासपुर-495001

उड़ीसा का गरीबी निवारण कार्यक्रम

डी० एन० दास

उसका दुबला-पतला शरीर चीथड़ों के बीच दिखाई पड़ रहा था। यह व्यक्ति अर्जुन प्रधान है जो 26 साल की युवावस्था में ही बूढ़ा हो गया था। धनकेनाल में चन्दापुर गांव की जिन्दगी उसको रास नहीं आई क्योंकि वहां उसकी आजीविका का कोई साधन नहीं था। वह भी उन सैंकड़ों-हजारों भूमिहीन मजदूरों में था जिनको साल में छः महीने काम नहीं मिलता और बाकी छः महीनों में थोड़ा बहुत कमाकर दो वक्त की रोटी पूरी करते हैं। वह भी अपने वर्ग के दूसरे लोगों की तरह अपना घरबार छोड़कर शहर में रोजी-रोटी के लिए निकल गया। अन्त में कटक में उसको घरेलू नौकर की नौकरी मिल गई। यह एक संयोग ही था जिसने उसको भूख से मरने से बचा लिया। गरीबों की रोजी-रोटी की तलाश के लिए कलकत्ता, जमशेदपुर, कटक और दूसरे शहरों में स्थानान्तरण की यह लहर केवल उड़ीसा राज्य के गांवों के लिए ही असाधारण नहीं है। दस साल पहले भूमिहीन खेतिहर मजदूरों और छोटे किसानों की गरीबी से मुक्ति के लिए विशेष कार्यक्रम शुरू किए गए थे। यह योजना क्षेत्र के अनुकूल तथा लक्ष्य प्रधान थी। इस प्रकार लघु कृषक विकास एजेंसी (एस. एफ. डी. ए.) तथा सीमान्त कृषक तथा कृषि मजदूर (एम. एफ. ए. एल.) का जन्म हुआ जिनमें 1979-80 में ही समन्वित ग्रामीण विकास एजेंसी (आई. आर. डी. ए.) का जन्म हुआ।

सुनिश्चित सिंचाई पर बल

उड़ीसा में कृषि में सुधार लाने तथा ग्रामीण रोजगार उत्पन्न करने के लिए पानी की सुविधा अत्यन्त आवश्यक थी। इस प्रकार लघु कृषक विकास एजेंसी ने भू-जल के उपयोग तथा उसके समुचित प्रबन्ध पर विशेष बल दिया। लघु तथा सीमांत कृषकों को कुएं खोदने तथा उन को चालू करने में सहायता दी गई ताकि उनको सारे साल पानी की सप्लाई मिलती रहे। लिफ्ट सिंचाई निगम ने एस. एफ. डी. ए. से प्राप्त आर्थिक सहायता से कुछ लिफ्ट सिंचाई केन्द्रों की भी स्थापना की। अन्य दिए गए साधनों में छोटे तथा मझोले कृषकों को सुधरे हुए किस्म के कृषि औजार, बैल, खाद खरीदने तथा शीतगृह का निर्माण आदि करने के लिए आर्थिक सहायता देना भी शामिल है।

सिंचाई द्वारा कितना अन्तर पड़ सकता है। इसका उदाहरण ढेंकनाल से 40 मील दूर बसा बांगुर सिंजी गांव है। 38 साल के नन्द किशोर साहू ने जोर-शोर से बताया कि लिफ्ट सिंचाई ने किस तरह ब्रह्मनी नदी के किनारों के गांवों की ऊसर भूमि को हरा-भरा कर दिया है। लघु कृषक विकास एजेंसी के आगमन से पूर्व 1971 में 1.40 हेक्टेयर भूमि में नंद किशोर धान की केवल एक फसल उगाता था। यह भी ज्यादातर वर्षा पर निर्भर थी और सालाना पैदावार केवल 16 क्विंटल थी जिसकी कीमत 1971 में 400 रुपये थी। अब गांव में तीन लिफ्ट सिंचाई केन्द्र हैं—पहले दो की स्थापना लिफ्ट सिंचाई निगम ने की और तीसरी एस. एफ. डी. ए. की 71,000 रुपये की सहायता से हुई। इस परियोजना की कुल लागत 1.40 लाख रुपये है। इस योजना के द्वारा 72 हेक्टेयर क्षेत्र को सुविधा मिल रही है। किसानों ने बड़ी संख्या में आलू की खेती की है और इसके साथ-साथ धान की और तिलहन की फसल भी पैदा की। टनों आलू बैब हिनडोला रोड सहकारी शीतगृह में जमा है जिसको 26 लाख रुपये की लागत से बनाया गया है और इसमें एस. एफ. डी. ए., द्वारा दिया गया 3,50,000 रु. का अनुदान भी शामिल है।

नन्द किशोर ने बताया कि अब उसकी आमदनी 11 गुना बढ़कर 4,400 रुपये तक पहुंच गई है। उसका एक लड़का ढेंकनाल कालिज में इन्टर वाणिज्य में पढ़ रहा है। यह गांव राज्य में अपनी नितांत गरीबी का एक नमूना है। गांव के 310 परिवारों में आदिवासी और हरिजनों के 100 परिवार रहते हैं। 70 प्रतिशत घर छोटे और मध्यम किसानों के हैं और शेष 30 प्रतिशत भूमिहीन मजदूरों के हैं। 10–12 परिवारों के पास आधा हेक्टेयर से भी कम भूमि है। इन सबको एस. एफ. डी. ए. का लाभ मिला है और उनके कहने के अनुसार उनको नई जिन्दगी मिली है।

पीने के पानी के लिए तीन नलकूपों पर गांव को गर्व है। गांव में सड़कों की स्थिति शोचनीय है। पानी जमा होने के साथ-साथ सड़कें बुरी तरह से खराब हो चुकी हैं और उनकी पूरी मरम्मत जरूरी है। इसकी जिम्मेदारी पंचायत की है किन्तु शायद वह सरकार की तरफ देख रही है कि कभी वह इसे बनवाएगी।

बहुद्देशीय कार्यनीति

ग्रामीण कारीगर जो अब तक उपेक्षित थे उनको भी प्रोत्साहन मिला है। ढेंकनाल से 40 किलोमीटर दूर थानी अनाली गांव में झोंपड़ियों में 35 आदिवासी परिवार रहते हैं। वह भूमिहीन परिवार हैं और उनका काम पेशा लोहारी है।

एस. एफ. डी. ए. और जिला उद्योग केन्द्र ने इन लोहारों को प्रशिक्षण देने का काम संभाला है और प्रत्येक व्यक्ति को 100 रुपये महीना भी दिया।

जिला उद्योग केन्द्र ने इनको जरूरी औजार और बैंक से 1300 रुपये का ऋण काम शुरू करने के लिए दिलाया है। इस ऋण की अदायगी के लिए इनको सिर्फ 650 रुपये वापिस देने हैं बाकी राशि सहायता मानी जाएगी। इस जाति के कारीगरों के हाथों में नए औजार और औरतों को आग की फूंक पर काम करते

और मजबूत हाथों द्वारा गर्म लाल लोहे पर हथौड़ा मारते हुए कृषि और दूसरे घरेलू औजारों जैसे कड़ाही, छूरी बनाते हुए देख दिल बाग-बाग हो जाता है।

35 वर्ष के मोहन कुमार ने बताया कि विविध प्रकार की चीजों को गांव के बाजार में बेचकर प्रत्येक कारीगर को दिन में 15 रुपये मुनाफा मिल जाता है कि अगर एक सहकारी विचार-धारा है कि अगर एक सहकारी विपणन समिति बना दी जाए तो इनको और भी ऊंची कीमतों पर बेचा जा सकता है।

पशु पालन

"ऑपरेशन फ्लड मिल्क" कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए छोटे और मध्यम वर्ग के किसानों की आय बढ़ाने के लिए दूध देने वाली गायें दी गई हैं। 36 वर्षीय हाटा बहेरा और 34 वर्षीय कृष्णा बहेरा जोकि ढेनकनाल से 35 किलोमीटर दूर खबेरा गांव के हैं प्रत्येक को एक गाय दी गई। यह गाय प्रतिदिन 6 से 7 लीटर दूध देती है। बहेरा उस दूध को प्राथमिक दुग्ध संघ को 1.90 रु. किलोग्राम से बेचते हैं। गायों का चारा यद्यपि आजकल बहुत महंगा पड़ता है फिर भी उनकी कुल प्रतिदिन की आय 4.30 रुपये हो जाती है। दुग्ध संघ उनको प्रतिदिन पैसे का भुगतान लगातार करते हैं। परियोजना अधिकारी ने बताया कि इस योजना में पशुओं का चारा इत्यादि उचित दरों पर ग्राहकों को दिया जाएगा और इसका खर्चा इनके दूध के मूल्य से काट लिया जाएगा।

पशु पालन के क्षेत्र में कुक्कुट पालन और बकरी पालने की योजनाओं के माध्यम से छोटे और सीमांत किसानों को न केवल सहायक रोजगार के अवसर ही उपलब्ध होते हैं बल्कि इसके अतिरिक्त ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के निवासियों के लिए भोजन में आवश्यक प्रोटीनों की कमी भी पूरी हो जाती है।

एक सीमांत कृषक के पुत्र, 26 वर्षीय निधि मेहतो, जोकि एक बेरोजगार स्नातक हैं, ने चार महीने पहले 100 मुर्गियों का एक कुक्कुट पालन केन्द्र आरम्भ किया। एक वाणिज्यिक बैंक ने इसके लिए उसे 5,600 रुपये का ऋण दिया और लघु कृषक विकास एजेंसी ने उसे 1830 रुपये की सहायता प्रदान की। इस धन की सहायता से उसने आधुनिक तकनीकी पर एक कुक्कुट पालन केन्द्र आरम्भ किया। उसने पक्षियों के रहने के लिए एक शेड का निर्माण किया तथा उन्हें नियमित रूप से दवा और चारा देने लगा। उसे आशा है कि सारा खर्चा निकाल लेने के बाद उसे 15 रुपये प्रतिदिन का लाभ होगा। वह अपने केन्द्र का और अधिक विस्तार करना चाहता है।

यह कुछ उदाहरण उड़ीसा राज्य के धनकेनाल जिले के ग्रामीण क्षेत्रों से लिए गए हैं। इस राज्य में इतनी अधिक गरीबी है कि 85 प्रतिशत से अधिक लोग गरीबी की रेखा से नीचे रहते हैं। पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विभिन्न विकास योजनाओं के सामूहिक लाभ को अधिकतम स्तर तक प्राप्त करने के लिए कार्य की गति और तेज करनी होगी।

लघु कृषक विकास एजेंसी सीमांत कृषक और खेतिहर मजदूर कमान एरिया विकास और सूखाग्रस्त क्षेत्र योजना जैसी गरीबी दूर करने वाली योजनाएं ग्रामीण क्षेत्रों में लोकप्रियता प्राप्त कर रही हैं जिससे अनेक गरीब परिवारों के जीवन स्तर में अन्तर आएगा।

लाखों लाख लाभान्वित

1971 में उड़ीसा के सात जिलों में लघु कृषक विकास एजेन्सी योजना आरम्भ की गई थी। इसके बाद इन सात जिलों को मिलाकर राज्य के 10 जिलों में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम नामक एक नया कार्यक्रम आरम्भ किया गया जिसने अभी तक 8.65 लाख छोटे, सीमान्त और भूमिहीन खेतिहर मजदूरों का पता लगाया है। इनमें से अभी तक आधे से अधिक लोग विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत प्रदत्त सुविधाओं से लाभान्वित हो चुके हैं। इस उद्देश्य के लिए इस दशाब्दी के दौरान 32.34 करोड़ रुपये की कुल राशि उपलब्ध करायी गयी है। इसमें से केन्द्र का अंशदान 23 करोड़ रुपये का रहा। इस योजना के अंतर्गत शानदार प्रगति हासिल की गई। लाभार्थियों के लिए 150764 कुएं खोदे गए और सामुदायिक नलकूप लगाए गए, 10,662 पम्पसैटों को विद्युत चालित किया गया; 28,140 दुधारू गायें; 1,152 कुक्कुट केन्द्र और 50,997 बकरी पालन तथा भेड़ पालन केन्द्र उपलब्ध कराए गए। इसके अतिरिक्त ग्रामीण उद्योग, ग्रामीण दस्तकारी कार्यक्रम, मछली पालन, काजू की फसल, कृषि निवेशों की पूर्ति, लघु व्यापार आदि के माध्यम से लगभग दो लाख ग्रामीण गरीबों के लिए रोजगार के अवसर जुटाए जा सके। छठी योजना के दौरान पूरे राज्य को एकीकृत ग्रामीण विकास योजना के अन्तर्गत लाया जाएगा तथा इस कार्यक्रम के लिए 110 करोड़ रुपए की राशि निर्धारित की गई है। इस योजना के अन्तर्गत लगभग दस लाख लोग लाभान्वित होंगे।

नई योजना के लिए 150 करोड़ रुपये

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अतिरिक्त बालासोर और पुरी जिलों में कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम भी कार्यान्वित किया जा रहा है। फूलबानी के आदिवासी क्षेत्रों और कलहांदी जिले के सूखाग्रस्त क्षेत्रों में सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम लागू किया जा रहा है। ये पूर्ण रूप से क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम हैं जिनके माध्यम से समुदाय के कमजोर वर्गों के लिए रोजगार के अवसर जुटाए जाते हैं।

इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त राज्य सरकार ने "ग्रामीण गरीबों का आर्थिक पुनर्वास" नामक अपनी एक नई योजना भी आरम्भ की है। इसके अन्तर्गत राज्य के 5 लाख गरीब से गरीब किसानों को लाभ पहुंचाया जाएगा। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत मुख्य रूप से भूमिहीन मजदूर लाभान्वित होंगे। इस कार्यक्रम के लिए 150 करोड़ रु. की राशि निर्धारित की गई है जिसमें से 75 प्रतिशत के सहायक उपकरण होंगे। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 1980-81 के दौरान 28,000 किसानों ने लाभ उठाया और आशा की जाती है कि 1981-82 के दौरान 50,000 किसान लाभान्वित होंगे। □

ऊर्जा और संचार माध्यमों की भूमिका

वसन्त साठे
सूचना और प्रसारण मंत्री

जन संचार के साधन किसी भी राष्ट्र के लिए आंख और कान का काम करते हैं। हमारी जो भी विकास योजनाएं होती हैं, उनको जन-संचार-साधनों की मार्फत ही जनता के सम्मुख लाया जाता है। ऊर्जा के नए स्रोत आज दुनिया-भर में चर्चा का विषय बने हुए हैं और इसी विषय को लेकर आज भारत दुनिया के समाचारों का केन्द्र बना हुआ है। अभी हाल ही में हमारी प्रिय प्रधानमंत्री ने नैरोबी में संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में आयोजित नए ऊर्जा साधनों के विषय पर अपना प्रमुख भाषण दिया था। विज्ञान के आधुनिकतम आविष्कार के जरिए विश्व को शान्ति और समृद्धि के हेतु और निकट लाने का यह एक प्रयत्न था। प्रधानमंत्री के ही शब्दों में, "ऊर्जा संकट की तलवार रूपी वास्तविकता न केवल एशिया और अफ्रीका के सिर पर ही लटक रही है बल्कि यूरोप और अमेरिका के विकसित क्षेत्रों के सिर पर भी लटक रही है। हमारे सामने एक दुरूह काम है। आज विभिन्न हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले जितने भी समूह हैं, उनका समान हित केवल इसी बात में निहित नहीं है कि वे सैनिक संघर्ष की स्थिति को बचाएं। यह संघर्ष होने पर कोई भी पक्ष विजेता के रूप में प्रकट होने को बचेगा ही नहीं। उनका समान हित इससे कुछ आगे बढ़कर काम करने में है। सुविज्ञ राजनयिक और प्रमुख विचारक आज इस बात की जोरदार दलील दे रहे हैं कि व्यक्तिगत राष्ट्रों की संकीर्ण और आत्मकेन्द्रित आर्थिक नीतियों के कारण आज मानव अस्तित्व को ही खतरा पैदा हो गया है।"

हम प्रकृति की शक्तियों से, सूर्य और हवा, आग और जल से ऊर्जा प्राप्त करते हैं। हम पौधों और पशुओं से, यहां तक कि मानव और पशुओं के अवशेषों से भी ऊर्जा प्राप्त करते हैं। हम कृषिजन्य उत्पादों के अवशेषों से लेकर आणविक ईंधन तक से ऊर्जा प्राप्त करते हैं।

व्यापारिक और गैर-व्यापारिक, दोनों प्रकार के ऊर्जा के साधनों का सह-अस्तित्व जरूरी है क्योंकि देश को हर तरह की क्षमतायुक्त ऊर्जा प्रणाली की जरूरत है। बड़े ताप--बिजलीघरों, आणविक ऊर्जा चालित बिजलीघरों और पन-बिजलीघरों से लेकर मात्र एक किलोवाट बिजली पैदा करने वाले सौर और वायु शक्ति से चालित जेनेरेटरों तक, यहां तक कि एक परिवार द्वारा प्रयुक्त होने वाले जैविक गैस प्लांट से लेकर पशु-शक्ति और जलाऊ लकड़ी तक--इन सभी ऊर्जा स्रोतों का भारत की ऊर्जा आवश्यकता के क्षेत्र में स्थान है।

एक नई दृष्टि

इससे पहले कि नए ऊर्जा संयंत्रों का ज्यादा बड़े पैमाने पर इस्तेमाल शुरू हो यह जरूरी होगा कि लोगों की कुछ पुरानी आदतों और सांस्कृतिक रिवाजों में परिवर्तन लाया जाए। इस सारे सवाल को एक नई नजर से देखने की जरूरत है। पुरानी आदतें मुश्किल से छूटती हैं। नए तरीकों को लोगों में लोकप्रिय बनाने की जरूरत होगी जिसके लिए संगठित रूप से एक कार्यक्रम चलाना होगा। वस्तुतः यह एक दिलचस्प काम है। आम आदमी को इन चीजों की कोई जानकारी नहीं है। उदाहरण के लिए: (1) सौर चूल्हे में खाना पकाने के लिए एक निश्चित समय-सारिणी और उपयोग-विधि का पालन करना जरूरी है जो मौजूदा तरीकों से भिन्न है; (2) जैविक गैस प्लांटों जैसे सामुदायिक आधार पर स्थापित सुविधाओं और साधनों का सांझा लाभ उठाने के लिए समाज में परस्पर नए हितार्थियों की जरूरत होगी; (3) देश के विभिन्न क्षेत्रों में हवा के बहाव का पैटर्न इस तरह का है कि अगर सिंचाई के कामों के लिए पानी के पम्पों को चलाने हेतु वायु-ऊर्जा का इस्तेमाल हम करना चाहें तो फसल बोने और काटने के पटर्न और काल-क्रम में यथावश्यक परिवर्तन करना जरूरी होगा। ऊपर बताए गए उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि जब तक नए ऊर्जा साधनों का उपयोग करने वालों में पर्याप्त चेतना और प्रति-बद्धता नहीं होगी तब तक इन साधनों को बड़े पैमाने पर स्वीकार नहीं किया जाएगा। जैविक-गैस प्लांटों का प्रसार होने में जो इतना लम्बा समय लगा है, उसका मुख्य कारण यही है कि इसका समुचित और

पर्याप्त प्रचार नहीं किया गया। गैस-प्लांटों की टक्नालाजी का व्यापारिक स्तर पर उपयोग काफी समय से किया जा रहा है और जैविक गैस-प्लांटों का यह डिजाइन बड़ा सरल और सीधा-सादा है, लेकिन इसके बावजूद जिन लोगों के पास ये प्लांट हैं उन्होंने वर्ष 1970 के दशक में ही जाकर इन्हें लगाने का फैसला तब किया जब उन्हें प्रचार और प्रोत्साहन के एक संगठित कार्यक्रम द्वारा ऐसे प्लांटों की जानकारी प्राप्त हुई।

संचार साधनों की भूमिका

ऊर्जा की बचत के इस नए कार्य में जन-संचार साधनों को एक अहम भूमिका निभानी है। पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों, रेडियो, टेलीविजन और फिल्मों का आज के जमाने में जो प्रभाव और महत्व है उसका मुख्य कारण ही यह है कि ये अशिक्षित, अर्द्धशिक्षित और शिक्षित लोगों को भी नई जानकारियां और सूचनाएं देने में सक्षम हैं। लोग काम और नींद की परवाह न करके भी अखबार पढ़ते हैं, रेडियो सुनते हैं, टेलीविजन या फिल्म देखते हैं, यह स्वयं में इस बात का प्रमाण है कि मनुष्य के लिए काम और नींद जैसी दो महत्वपूर्ण बातों में भी जन-संचार के साधन दखल दे रहे हैं। हमारे जैसे समाज में, जहां निरक्षरता की दर 63.83 प्रतिशत जितनी ऊंची है, फिल्म, रेडियो और टेलीविजन का प्रयोग लोगों को जानकारी देने और प्रशिक्षित करने में सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि हमारी वर्तमान पीढ़ी अपने बुजुर्गों की तुलना में कहीं ज्यादा जानकारी रखती है और उन्हें नई-नई बातों का पता है। जन-संचार साधनों का व्यापक उपयोग किए जाने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि स्वास्थ्य कृषि आदि जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाने में बहुत बड़ी सफलता मिल रही है। इसी तरह इन माध्यमों में आधुनिक नयी ऊर्जा प्रणालियों के बारे में भी जन-चेतना उत्पन्न करना संभव होना चाहिए। इस दिशा में इंडियन आयल कारपोरेशन जैसे सरकारी प्रतिष्ठानों और सरकारी एजेंसियों द्वारा भी कुछ काम किया जा रहा है।

इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता कि परिवर्तन की प्रक्रिया को तेजतर बनाने में जन-संचार के विभिन्न माध्यमों का योगदान होता है। लेकिन चूंकि हमारी जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग अभी भी निरक्षर है, और देश की आबादी विभिन्न भाषाओं और बोलियों का प्रयोग करती है, इसलिए ऊर्जा की बचत करने की जरूरत समझने और नए ऊर्जा स्रोतों को लोकप्रिय बनाने के लिए आवाज के माध्यम (रेडियो) का सहारा लेने के सिवाय दूसरा कोई चारा ही नहीं है। यह संदेश न केवल सामान्य कार्यक्रम पैनलों द्वारा ही प्रसारित किया जाता है बल्कि "कृषि और घर", "विज्ञान वार्ता" आदि कार्यक्रमों के माध्यमों से भी इसे विशेष कार्यक्रमों के जरिए लोगों तक पहुंचाया जाता है। इसके अलावा "सामयिकी", "करेंट अफेयर्स" आदि कार्यक्रमों का उपयोग भी इस संदेश को रेडियो के श्रोताओं तक पहुंचाने के लिए किया जा रहा है।

टेलीविजन सेवा हालांकि अभी मुख्यतः शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित है, लेकिन इस माध्यम का भी इस उद्देश्य के लिए अधिकाधिक इस्तेमाल किया जा रहा है। इसका दृश्य-श्रव्य, दोनों ही प्रभाव होने के कारण दर्शकों पर ज्यादा प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। जैविक गैस (बायो गैस) प्लांटों की स्थापना, उनका रख-रखाव, उनकी मरम्मत आदि से संबंधित प्रदर्शन इस माध्यम के द्वारा ज्यादा सफलतापूर्वक किए जा सकते हैं। इसके लिए विशेष कृषि-कार्यक्रम और छोटे-छोटे "विज्ञान स्किट्स" जैसे कार्यक्रमों का उपयोग किया जाता है।

छोटी-छोटी पुस्तकों, पम्पसेटों और अखबारों के जरिए भी जनता को प्रेरित करने का काम किया जाता है। यह काम सरकारी और गैर-सरकारी दोनों प्रकार की एजेंसियों द्वारा किया जाता है। ग्रामीण भारत की जनता को ऊर्जा बचाने की जरूरत के बारे में, साथ ही नए ऊर्जा-स्रोतों के बारे में प्रदर्शन के रूप में जानकारी देने के लिए क्षेत्रीय प्रचार अधिकारियों द्वारा स्थानीय अधिकारियों के परामर्श और सहयोग से जिला-स्तर पर महत्वपूर्ण प्रदर्शन-कार्यक्रम चलाए जा सकते हैं।

पुस्तिकाओं, पम्पसेटों और अखबार तथा बाह्य विज्ञापनों द्वारा जनता को अभिप्रेरित करने का प्रयास किया जाता है। यह काम सरकारी और गैर-सरकारी दोनों प्रकार की एजेंसियों द्वारा किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में जनता को ऊर्जा की बचत करने तथा उन्हें नए ऊर्जा स्रोतों के बारे में जानकारी देने के लिए क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय का उपयोग किया जा सकता है। वास्तव में देखें तो क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी जिला-स्तर पर स्थानीय अधिकारियों की सहायता और परामर्श से ज्यादा प्रदर्शनात्मक कार्यक्रम का आयोजन कर सकते हैं, नए ऊर्जा स्रोतों के इस्तेमाल के बारे में उनकी कार्य-कुशलता का मूल्यांकन कर सकते हैं और अधिकारियों को इस बात की जानकारी दे सकते हैं कि नए ऊर्जास्रोतों के उपयोग के यंत्रों में किस प्रकार सुधार की जरूरत है।

इस सन्दर्भ में कथाओं, रासलीलाओं, नौटंकियों, तमाशों, कव्वाली आदि जैसी पारम्परिक लोक-माध्यमों का भी महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है, क्योंकि इनमें प्रयोग में लायी जाने वाली भाषा ग्रामीण जनता बहुत आसानी से समझती है और आत्मसात करती है। इस सिलसिले में केरल में युवकों के एक दल ने बहुत ही सराहनीय काम किया है। इन युवकों ने केरल के ग्रामीण जनों तक विज्ञान की जानकारी पहुंचायी है। हमारे देश में जो विज्ञान-केन्द्र और नेहरू केन्द्र हैं, वे भी इस काम को कर सकते हैं।

संचार माध्यमों का प्रभाव

सिद्धांत रूप में देखें तो मनुष्य खुद सोचने-समझने और अपने हिताहित को ध्यान में रखते हुए विचार करने को स्वतंत्र हैं। लेकिन व्यावहारिक स्थिति यह है कि वह जिस परिवेश में रहता है, उस परिवेश में कार्य कर रही विभिन्न शक्तियां अवचेतन रूप से उसकी आदतों और आचरण को नियंत्रित और प्रभावित ही नहीं करती बल्कि उनको एक खास रुचि में ढालती रहती हैं जिनकी अक्सर जानकारी भी नहीं होती। हम समझाने-बुझाने के एक ऐसे

[शेष पृष्ठ 27 पर]

भारतीय हथकरघा उद्योग

शकुन्तला धवन

हथकरघा उद्योग भारत का एक प्राचीन एवं महत्वपूर्ण सूती उद्योग है । यह देश के विशालतम उद्योगों म से एक तथा ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था का प्रमुख आधार है। रोजगार की दृष्टि से इस प्रकार कृषि के पश्चात् हथकरघा उद्योग का ही स्थान है । यह उद्योग पूर्ण रूप से एक ग्रामीण कार्य-कलाप है। 463 लाख रुपये की लागत से भारत सरकार ने 4 सघन हथकरघा परियोजनाएं और 2 निर्यात परियोजनाएं स्थापित की हैं। "हथकरघा की शिवरामन समिति" की सिफारिशों के आधार पर करघा क्षेत्र के विकास हेतु सूत की सप्लाई, वित्तीय सहायता एवं विपणन आदि की आवश्यक सुविधाएं जुटाने के लिए इन परियोजनाओं को अगस्त 1976 में शुरू किया गया । 1980–81 तक इन परियोजनाओं के अन्तर्गत 22,000 करघों की व्यवस्था का लक्ष्य था एवं बाद में इनको सहकारी विकास परियोजनाओं में परिणत होना था । सरकार का दूसरा कदम हथकरघा सहकारी समितियों को औद्योगिक आकार प्रदान कर 40,000 करघाहीन बुनकरों को निरन्तर रोजगार प्रदान करना है । छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान सहकारी संगठनों में बुनकरों की संख्या को 2.07 लाख से 3 लाख तक बढ़ाया है । श्रेष्ठता एवं अद्वितीय हस्तकला दृष्टि से हथकरघा उद्योग की एक पुरानी परम्परा है । भारत सूती कपड़े बनाने में 2,000 वर्षों से अग्रणी रहा है । इसने न केवल देश की वस्त्र आवश्यकता को पूरा किया वरन् देश-विदेश में दूर-दूर तक अत्युत्तम कपड़े का भी निर्यात किया। ढाका की मलमल, मुसुलीपत्तनम का कलमकरिज, गुजरात का जरी वस्त्र, उड़ीसा के इकात वस्त्र एवं औरगांबाद के हिम्रू से सभी भली—भांति परिचित हैं । इनके अतिरिक्त अन्य लोकप्रिय परम्परागत किस्में भी हैं जिनके लिए भारत सदियों से प्रसिद्ध रहा है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था

विकास के वर्तमान मोड़ तक आने से पूर्व हथकरघा उद्योग की विकास यात्रा में अनेक उतार-चढ़ाव आए । फिर भी इसका स्वरूप कायम रहा । आज यह उद्योग देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है । हमारी पंचवर्षीय योजनाएं इस उद्योग के विकास के लिए यथेष्ट ध्यान दे रही हैं । विभिन्न योजनाओं को लागू कर इस ओर अनेक पग उठाए जा चुके हैं । पहली पंचवर्षीय योजना में जहां हथकरघा उद्योग के विकास के लिए 12.2 करोड़ रुपये खर्च किए गए वहीं छठी योजना (1980–85) में इस उद्योग के चहुंमुखी विकास के लिए 120 करोड़ रुपये का प्रावधान है । देश में लगभग 38 लाख हथकरघे हैं जिनमें 12.7 लाख सहकारी क्षेत्र में हैं । यह उद्योग प्रमुख रूप से ग्रामीण क्रिया-कलाप है । यह प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में रोजगार प्रदान करता है । यह आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के नागरिकों के जीवन-यापन का प्रमुख साधन है । समूचे वस्त्र उद्योग संगठन का 700 मिलों में जहां मुश्किल से दस लाख व्यक्ति अपनी जीविका चलाते हैं वहां बुनाई एवं अन्य सहायक क्रिया-कलापों से यह उद्योग एक करोड़ व्यक्तियों को जीविका प्रदान करता है । आज हमारे हथकरघा उत्पादन की कीमत लगभग 1200 करोड़ रुपये है जिसमें सहकारी क्षेत्रों के उत्पादन का मूल्य 250 करोड़ रुपये है । छठी योजना के अन्त तक इसके उत्पादन में वृद्धि के लक्ष्य को 410 करोड़ मीटर रखा गया है जबकि आज यह 290 करोड़ मीटर है । 1984–85 में कपड़े की मांग का अनुमान 1330 करोड़ मीटर आंका गया है जिसमें 410 करोड़ मीटर का अंशदान देने हेतु हथकरघा उद्योग को विकसित किया जाएगा । इस प्रकार वस्त्रों की कुल आवश्यकता का 30 प्रतिशत हथकरघा क्षेत्र से प्राप्त होगा । जहां तक हथकरघा उद्योग से विदेशी मुद्रा अर्जित करने का संबंध है, हथकरघा उत्पाद समूची दुनिया के 130 देशों से अधिक देशों में निर्यात किया जाता है । दो दशक पूर्व 1960 से हथकरघा वस्तुएं लगभग 5 करोड़ रुपये की निर्यात की गई जो 1979–80 में बढ़कर 130 करोड़ रुपये तक पहुंच गई ।

विकास एवं कार्यक्रम

नए आर्थिक कार्यक्रमों में हथकरघा को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । इसके चहुमुखी विकास के लिए केन्द्रीय योजना के आरम्भ के साथ एक व्यापक कार्यक्रम शुरू किया गया । 7 अगस्त, 1978 को केन्द्रीय सरकार द्वारा संसद में घोषित वस्त्र नीति ने समाज के कमजोर वर्गों के लिए सस्ते कपड़े के उत्पादन के साथ वस्त्र उत्पादन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । विकास कार्यक्रम का मुख्य ध्येय था करघा उद्योग को स्थिरता प्रदान करना तथा उससे प्राप्त रोजगार को जीवित रखना । कमजोर वर्गों को तकनीकी डिजाइन

संबंधी सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से 23 बुनकर सेवा केन्द्र तथा 2 तकनीकी संस्थान स्थापित किए गए हैं जिनमें से एक उत्तर प्रदेश में वाराणसी तथा अन्य तमिलनाडु में सलेम में स्थित हैं। विकास की गति को और तीव्र करने तथा इसके मार्ग में आने वाली कठिनाइयों के निवारण हेतु एक विकास आयुक्त भी नियुक्त किया गया है। कुछ राज्यों ने हथकरघा क्षेत्र को पुन: प्रतिष्ठित एवं जाग्रत करने के लिए एक व्यापक कार्यक्रम हाथ में लिया गया है जिसकी विशेषताएं हैं : (1) करघा आधुनिकीकरण, (2) बुनकरों को विकसित तकनीकी प्रशिक्षण देना, (3) छठी योजना के अन्त तक बुनकरों को 60 प्रतिशत तक करने के उद्देश्य से सहकारी समितियों का विकास, (4) हथकरघा विकास निगमों द्वारा सहकारी समितियों से बाहर के बुनकरों को सहायता देना (25 सघन विकास परियोजनाएं और 21 निर्यात उत्पादन परियोजनाएं स्थापित की जा चुकी हैं), (5) उत्पादन और विपणन के लिए प्राथमिक और शीर्ष सहकारी संस्थानों को मजबूत बनाना, (6) बिक्रय निगमों का विस्तार, (7) कमजोर वर्गों के लिए धोती और जनता साड़ियों का उत्पादन, (8) करघा की स्थापना पूर्व एवं पश्चात् करघा स्थल के लिए प्रसरण सुविधा, (9) व्यापारिक बैंक तथा भारतीय रिजर्व बैंक की हथकरघा वित्त योजना के द्वारा ऋणों का वास्तविक विस्तार, (10) सहकारी संस्थानों के द्वारा कताई क्षमता विपणन और प्रसरण में वृद्धि करने के लिए राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा विशेष सहायता, (11) धागा, रंग और रसायनों के अच्छे वितरण और सप्लाई व सुधारी किस्म को बढ़ाने का कार्यक्रम, (12) उत्पादन आधार में परिवर्तन लाना और बहुरेशा विधि के प्रयोग में वृद्धि करना, (13) भारतीय हथकरघा तकनीक और बुनकर सेवा केन्द्रों का विस्तार कर और उन्हें और मजबूत बनाकर विकास अनुसंधान करना, (14) निर्यात करने के लिए उत्पादन आधार में वृद्धि करने के लिए मेलों और प्रदर्शनियों सहित प्रचार कार्यक्रम ।

सहकारिता तथा विपणन

फिलहाल हमारे देश में लगभग 35 करघा सहकारी समितियों के अन्तर्गत आता है। निष्क्रिय सहकारी समितियों को पुनर्जीवित करने और उनको एक नया रूप देने का कार्य भी शुरू किया गया है। सहकारी नियंत्रण से बाहर के हथकरघा बुनकरों को राज्य हथकरघा विकास निगमों द्वारा भी सहायता दी गई है। केन्द्रीय सरकार के अतिरिक्त राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम 1976–77 से अनुदान और ऋण के माध्यम से हथकरघा सहकारी समितियों के विकास के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने वाला एक बड़ा माध्यम बन गया है। बुनकरों के सहयोग से अधिक से अधिक बुनकर समितियां और हथकरधा निगम हथकरघा के क्षेत्र में प्रवेश कर गए हैं। साथ ही इस उद्योग को स्वस्थ व्यापारिक ढांचे में ढालने के लिए हथकरघा वस्तुओं की मांग उपभोक्ताओं में उत्तरोत्तर बढ़ाने के लिए कई उपाय किए गए हैं। सरकार शीर्ष समितियों को शेयर पूंजी सहायता दे रही है और हथरकघा विकास निगम राज्यों में सहकारी नियंत्रण से बाहर बुनकरों और प्राथमिक बुनकर समितियों के हथकरघा उत्पादों के विपणन का अधिग्रहण कर रही है। चालू वित्त वर्ष के लिए 45 करोड़ रुपये का प्रस्ताव रखा गया है। हथकरघा वस्त्रों को अधिक ग्राह्य बनाने के लिए, राज्य सरकारों को करघा पूर्व स्थापना संबंध और करघा-स्थल की प्रसरण सुविधाओं में केन्द्रीय सरकार सहायता दे रही है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए चालू वित्त वर्ष के दौरान 2 करोड़ रुपये रखे गए हैं। हमारी सरकार ने हथकरघा क्षेत्र के लिए केवल 11 वस्तुओं को सुरक्षित रखा है ताकि हथकरघा उत्पादों को मशीनी करघे तथा मिलों द्वारा तैयार सूती उत्पादन की अनुचित प्रतियोगिता से बचाया जा सके।

निर्यात आय

हथकरघा उद्योग ने निर्यात में एक महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर ली है। केन्द्रीय सरकार ने इसकी उन्नति के लिए अनेक उपाय किए हैं। 1978-79 के शुरू के 10 महीनों में हथकरघा वस्तुओं से 213 करोड़ रुपये निर्यात आय हुई जबकि पिछले वर्ष उसी अवधि में 203 करोड़ रुपये निर्यात आय हुई थी। अब हमारी हथकरघा उत्पादों की निर्यात आय 300 करोड़ रुपये वार्षिक तक पहुंच गयी है जिससे स्पष्ट है कि हमारे उत्पाद पूरे विश्व में बहुप्रचलित हैं। विक्रय वृद्धि और सुधारे हुए उत्पादों की जानकारी में वृद्धि के उद्देश्य से राष्ट्रीय स्तर की प्रदर्शनियां देश के विभिन्न भागों में आयोजित की जाती हैं। हाल ही में दिल्ली में एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। □

69, भाई परमानन्द नगर,
दिल्ली-110009

ऊर्जा और संचार माध्यमों . . . [पृष्ठ 25 का शेषांश]

युग में रह रहे हैं जिसमें हमारी रोजमर्रा की आदतों को बदलने की, नई आवश्यकताएं उत्पन्न करने की और हमारे खरीदारी संबंधी निर्णयों और विचारों को प्रभावित करने की, क्रिया बराबर चल रही है हालांकि जन-संचार माध्यम की तकनीक एक तटस्थ तकनीक है, लेकिन जो लोग इस माध्यम से प्रसारित और प्रदर्शित होने वाले संदेशों की रचना करते हैं, उनके सामने एक सामाजिक उद्देश्य, लक्ष्य होता है। समाज को दबाव या जोरजबर्दस्ती से नया रास्ता अपनाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। यह काम समझा-बूझा कर ही किया जा सकता है, और करना होगा। लोगों में नए ऊर्जा साधनों को लोकप्रिय बनाने की दिशा में भी जन-संचार माध्यम एक अहम भूमिका निभा सकता है। □

("योजना" से साभार)

गांवों में रोजगार की समस्या

जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

जिस देश में 68 करोड़ प्राणियों के लिए प्रतिदिन भोजन, साग-सब्जी, पहनने के लिए कपड़ों और बारदाने के लिए टाट और पटसन की जरूरत पड़ती हो, उस देश के बारे में यह सवाल करना, कि वहां के गांवों में रोजगार की जरूरत है और उसकी व्यवस्था करनी चाहिए, अटपटा सा लगता है। हमारी जनसंख्या का 80 प्रतिशत भाग गांवों में रहता है, शहरों में मात्र 20 प्रतिशत। ऐसा इसलिए है कि देश में खेतों की जोतों की संख्या कुछ भी हो, उसका आकार बहुत कम है। देश में 4 करोड़ 45 लाख जोतें एक हेक्टेयर से भी कम हैं और जो जोतें एक से दो हेक्टेयर की हैं, उनकी संख्या भी 1 करोड़ 47 लाख है। और इस प्रकार की 5 करोड़ 52 लाख जोतों में देश की खेती योग्य भूमि का केवल 23.7 प्रतिशत आता है। यानी जिस भूमि पर अधिकतर किसान अवलम्बित होते हैं, वह कम है। यह नहीं है कि देश में बड़ी जोतें नहीं हैं। समस्त खेती योग्य भूमि का 56.5 प्रतिशत भाग ऐसी जोतों में है जिसका आकार 4 हेक्टेयर से अधिक का है। संख्या की दृष्टि से देखें तो 4 से 10 हेक्टेयर की जोतें 82 लाख हैं और 10 हेक्टेयर से अधिक की जोतें केवल 24 लाख हैं। जोत का मतलब है कि उसके साथ एक किसान परिवार जुड़ा हुआ है। यानी जो जोत ऐसी है जो सम्पन्नता प्रदान कर सकती है, उसका लाभ केवल 24 लाख परिवारों को होता है। और उससे कुछ कम सुविधा 82 लाख परिवारों को है। इन लोगों के पास देश की आधे से अधिक भूमि है। 80 प्रतिशत शेष जनता छोटी जोतों पर आश्रित है।

हरित क्रान्ति के फलस्वरूप सबसे अधिक विकसित जिला पंजाब का लुधियाना माना जाता है, पर वहां भी छोटे किसानों की औसत जोत पौने दो हेक्टेयर पड़ती है जिससे लगभग 10 हजार रुपये वार्षिक की आय होती है और उसमें परिवार के कई लोगों को लगना पड़ता है, बिजली के पम्प लिए हों, अन्य उपकरण लिए हों, सुधरे बीज, उर्वरक और कीटनाशक लिए हों, उनका ऋण मयब्याज के चुकाना होता है। परिणाम यह है कि वहां पर भी किसान परिवार के लोगों को अतिरिक्त रोजगार की जरूरत रहती है। जो प्रान्त या क्षेत्र इतने सौभाग्यशाली नहीं हैं, और जहां खेती इतनी उन्नत नहीं हुई है, वहां एक या दो हेक्टेयर भूमि पर क्या प्राप्त होता है, उसकी कल्पना ही की जा सकती है।

भारत में 70 प्रतिशत भूमि ऐसी है जहां सिचाई की व्यवस्था नहीं है और प्रतिवर्ष एक-तिहाई क्षेत्र में सूखा पड़ जाता है। अच्छे से अच्छे वर्षों में भी यह पाया गया है कि कहीं न कहीं पानी न बरसने से अकाल की स्थिति आ गई है। लेकिन जहां खेती खूब होती है और दो-दो या तीन-तीन फसलें होती हैं, वहां भी इन गांवों में काम करने वाले जो भूमिहीन किसान ह उनको प्राय: आधे वर्ष खाली रहना पड़ता है और छोटे किसानों को भी खेती के काम के बाद खाली रहना पड़ता है। एक जमाना था जब गांव आत्मनिर्भर होते थे। उस समय किसान अपने लिए कपड़ा बुनते थे, चारपाइयों के बान बुनते थे, रस्सियों के लिए सन बुनते थे। पशुपालन द्वारा घी-दूध का धन्धा करते थे और फुरसत के दिनों में अपनी बैलगाड़ी का प्रयोग सामान या सवारी ढोने के लिए करते थे। मिलों के कपड़े के बाद घरों में सूत कातना बन्द हो गया, बाजार में तैयार माल मिलने लगा, आटे की मिलें लग गईं और सवारी का स्थान बसों ने ले लिया। अब जिसके पास ट्रैक्टर आ गया वह उसके पीछे ठेला लगाकर उसमें सामान भरकर ले जाने लगा और दूसरों का भी सामान पहुंचाने लगा। इस प्रकार जो ऐसे काम थे, जो छोटे किसान या भूमिहीन मजदूरों को उन दिनों में अतिरिक्त रोजगार देते थे, जब खेतों में काम नहीं होता था, वे सूख गए और यह सवाल ज्वलन्त हो उठा कि हमारे गांवों में जो अधिकांश जनता अर्ध बेकारी की स्थिति में रहती है उसके लिए रोजगार के क्या उपाय हों।

महात्मा गांधी गांवों की आत्मनिर्भरता के लिए प्रयत्नशील थे। उन्होंने खादी को जो संरक्षण दिया, उसकी मूल भावना किसानों को आर्थिक दृष्टि से पुष्ट करने की थी और भारत के उस उद्योग को कायम रखना था, जो शताब्दियों पुराना था और जिसने भारत को अन्तर्राष्ट्रीय जगत में ख्याति और धन अर्जित कराया था।

परन्तु बावजूद इसके कि सरकारी कार्यालयों में चपरासियों की वर्दी खरीदने के लिए खादी अनिवार्य है, खादी का प्रचलन कम होता गया। एक समय स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों की वह वेशभूषा थी, अब उसकी जरूरत नहीं रही।

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार बढ़ाने की योजनाएं प्रथम पंचवर्षीय योजना से चल रही हैं और सबसे पहले गांवों में सामुदायिक विकास की

योजना प्रारम्भ की गई थी। चार वर्ष पहले जब देश में भयंकर सूखा पड़ा तो "काम के लिए अन्न" योजना शुरु की गई। इन योजनाओं में किसानों और भूमिहीन मजदूरों को काम के बदले अनाज दिया जाता था। इस बहाने बहुत से काम हुए, सड़कें बनीं, नहरों की चैनलें खुल गईं, पुलियाएं बनीं और उस सब का परिणाम यह हुआ कि भयंकर सूखा होने के बाद भी हमारे ग्रामीण भुखमरी का शिकार नहीं हुए। सौभाग्य से देश में अन्न का विपुल भंडार था जिसका उपयोग किया गया। परन्तु उस योजना से जो अनुभव हुआ, उसके बाद ऐसे काल में भी जब सूखा नहीं था, इस कार्यक्रम को चालू रखा गया और स्थायी कर दिया गया। अब तो छठी पंचवर्षीय योजना में इस कार्यक्रम को सम्मिलित कर लिया गया है और इसके लिए योजना-काल में 10 अरब रुपये का प्रावधान कर दिया गया है। जब यह कार्यक्रम राहत-मात्र था, तो ग्रामसभाएं या जिला प्रोत्साहन जहां अधिक सूखा होता था, वहां सड़कों, पुलियों आदि का निर्माण किया जाता था, अब इस कार्य को योजना से जोड़ दिया गया है और उसके अन्तर्गत सड़कों के निर्माण, छोटी सिंचाई योजनाएं चालू करना, पुलियां बनाना, भूमि को समतल करके खेती-योग्य बनाना, वनारोपण, जलप्राप्ति की व्यवस्था, गांवों में जल के निकास के लिए नालियां तथा नाले बनाना और गांवों में अच्छी प्रकार के रहने-योग्य नए घर बनाना भी इस कार्यक्रम का अंग बन गए हैं।

अब इन मजदूरों के लिए केवल अन्न ही नहीं दिया जाता, बल्कि अन्न और रुपये दोनों दिए जाते हैं। पिछले चार वर्षों में 9 अरब रुपये मूल्य का 58 लाख टन गल्ला इन मजदूरों को बांटा गया। यह मात्र उतनी है, जितनी सन् 1950-51 में और उसके बाद के वर्षों में सारे देश में पैदा होती थी।

ये तो हुए इस कार्यक्रम के प्रत्यक्ष लाभ, यानी लोग भुखमरी से बच गए और उनकी जीविका के साधन बने। पर इस कार्यक्रम ने हमारे योजना-कार्यक्रम को एक नया आयाम भी दिया। अभी तक योजना का निर्धारण ऊपर से होता था, केन्द्र या राज्य सरकारों के मुख्यालयों से। ग्रामीण रोजगार के ये कार्यक्रम ग्राम-पंचायत की सलाह से किए जाते हैं और वस्तुतः इसमें सभी ग्रामवासियों से सलाह-मशविरा किया जाता है और इसका लाभ भी थोड़े से लोगों को छोड़कर सारे ग्रामवासियों को मजदूरी के रूप में और पूरे ग्राम को सुविधाओं की वृद्धि के रूप में होता है।

इस कार्यक्रम का एक अप्रत्यक्ष लाभ यह हुआ कि जब ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को जो काम करने योग्य था, रोजगार मिलने लगा तो मजदूरी की साधारण दर बढ़ गई, क्योंकि बेकार मजदूरों का लाभ उठाकर शेष मजदूरों को कम मजदूरी दी जाती थी। कुछ योजनाओं के कारण कुशल कारीगरों, जैसे राजों, बढ़इयों, और अन्य अर्द्ध-कुशल कारीगरों की अधिक आवश्यकता पड़ी और बहुत से लोगों ने यह काम सीख लिया जिससे उनकी क्रय शक्ति बढ़ गई। चूंकि मजदूरी के रूप में अन्न भी दिया जाता था, इसलिए सूखे के बावजूद अन्न के दाम नहीं बढ़े और क्रयशक्ति भी नहीं घटी, जैसा कि प्रायः अकाल के दिनों में होता रहता था। और यही कारण था कि देश यह गौरव प्राप्त कर सका कि सूखे के कारण यहां कोई भी जान नहीं गई।

जिन-जिन क्षेत्रों में यह कार्यक्रम कार्यान्वित किए गए, वहां प्रति औसत व्यक्ति की आय में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अलग-अलग क्षेत्रों में कहीं-कहीं यह वृद्धि दुगनी भी हो गई। गांवों में सड़कों का निर्माण हुआ, नालियां खोदी गईं, नए मकान बन गए और गांव स्वच्छ-साफ और सुविधाजनक दिखाई देने लगे। इन कार्यक्रमों में जिन लोगों ने भाग लिया है, उनकी उम्र 16 से 45 साल के बीच की थी और उनमें 70 प्रतिशत विशुद्ध मजदूर ही थे। 30 प्रतिशत ऐसे थे जिनकी छोटी-छोटी जोतें थीं या जो गांव में अन्य काम भी करते थे।

सन् 1980 में केन्द्र ने राज्यों को इस कार्य के लिए 92 करोड़ रुपये दिए थे। वस्तुतः ग्रामीण विकास का यह सबसे बड़ा कार्यक्रम है और इस मद पर जितना धन निर्धारित किया गया और किसी मद में नहीं दिया गया। और यह स्वाभाविक भी है कि पंचवर्षीय योजना का मुख्य उद्देश्य देश की जनता के रहन-सहन के स्तर को ऊंचा करना है। जो लोग गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे हैं उनको इस रेखा से ऊपर उठाना है और हमारे गांवों को स्वच्छ, सुन्दर और रहने के लिए सभी सुविधाओं से युक्त करना है। यह सही है कि खेती का विकास हमारे देश की आर्थिक स्थिति के सुधार के लिए सबसे बड़ा उपकरण है। परन्तु हमारे यहां भूमि के स्वामित्व में जो असमानता है उससे खेती के विकास के बाद भी उसका पूरा लाभ उन खेतों के आसपास रहने वाले मजदूरों को नहीं मिलता। खेती से उत्पन्न वस्तुओं के मूल्यों के तथा अन्य वस्तुओं के मूल्यों में जो वृद्धि हुई है उसके कारण उन लोगों को कठिनाई पैदा होती है, जो स्वयं खेती नहीं करते। इसलिए इस प्रकार के रोजगार कार्यक्रम और भी जरूरी हो गए हैं। इन कार्यक्रमों और देश की उस जनता को तत्काल लाभ पहुंचा है जिसका सुधार हमारी योजना का सबसे बड़ा लक्ष्य है।

गांवों के विकास की बहुतेरी ऐसी समस्याएं हैं जिनका सम्बन्ध आधारभूत ढांचे से है। विंध्य प्रदेश के टीकमगढ़ जिले में जतार-नामक स्थान है। वहां पर एक विशाल तालाब है जिसके फलस्वरूप उत्तम चावल तो होता है वहां पर बढ़िया चीनिया केले भी होते हैं। परन्तु रेल वहां से दूर है और वह केले वहां ही सड़ जाते रहे हैं दूसरी तरफ झांसी-मणिकपुर लाइन पर बरुआ सागर है जहां पैदा होने वाली सब्जी और अदरक रेलवे स्टेशन पर तो बिकती है ही, रेलगाड़ी के डिब्बों में भरकर दिल्ली के बाजार तक आ जाती है और उत्पादकों को अच्छा दाम मिल जाता है। तमिलनाडु में थिगलूर नाम का एक गांव है जहां फसल अच्छी होती है और उसके इर्दगिर्द 15 और गांव भी उसी प्रकार के हैं। लेकिन इन किसानों को मंडी तक अपना माल भेजने के लिए बहुत लम्बा रास्ता तय करना पड़ता था। यद्यपि मंडी वहां से दिखाई पड़ती थी। कारण यह था कि उनके और मंडी के बीच में एक साठ मीटर गहरा नाला या खार था। उस पर एक पुलिया बनाने की जरूरत थी, लेकिन काम ऐसा था कि पंचायत उसके लिए पर्याप्त साधन नहीं जुटा सकती थी। ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत इस कार्य के लिए मजदूरी प्रदान की गई और पंचायत ने किसानों से 27 हजार रुपये पुलिया के सामान के लिए इकट्ठे किए। परिणामस्वरूप एक ऐसी सड़क बन गई जिस पर मोटरें दौड़ सकती हैं और किसानों का माल बहुत कम समय और बहुत कम लागत पर मंडी पहुंचने लगा। 15

किसानों के इस समूह की दुनिया ही बदल गई एक पुलिया के निर्माण से ।

राजस्थान ऐसा राज्य है जहां पर अक्सर यह शिकायत रहती है कि पानी नहीं बरसता और अकाल पड़ता है । पर वहां ऐसे भी क्षेत्र हैं जहां बाढ़ें आया करती हैं । पर उनके लिए कोई स्थायी व्यवस्था नहीं सोची गई । ऐसा ही एक गांव था जहां प्रतिवर्ष बाढ़ आती थी और एक नाला भर जाता था । एक छोटे-से बांध से उसे रोका जा सकता था, पर वह बांध किसी योजना-कार्यक्रम में सम्मिलित नहीं हो सका । ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम से इस काम के लिए 5000 रुपये के खर्च से एक बंधिया बांधी गई । उससे दो फायदे हुए । पहले तो बाढ़ की विभीषिका रुक गई और दूसरे सिंचाई की ऐसी निश्चित व्यवस्था हो गई कि अब गांव वाले जो फसलें उगाते हैं उनका कुल मूल्य इन 5000 रुपये से कई गुना होता है ।

इस प्रकार ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम ग्रामीण जीवन के लिए एक वरदान सिद्ध हुआ है । इसमें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अल्पकालीन और दीर्घकालीन दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त हुए हैं । जिनको लाभ मिला है, उनकी सेहत सुधरी है, जिनको नहीं मिला उनका वातावरण सुधरा है । यानी कुल मिलाकर सारे देहाती क्षेत्र को लाभ हुआ है और यह आशा है कि यह पूरा कार्यक्रम कार्यान्वित हो जाएगा तो हमारे गांवों को एक नया ही रूप प्रदान करेगा । □

55, काकानगर,
नई दिल्ली-3

रेडियो सक्रियता से कृषि के क्षेत्र में क्रांति

✳ शक्ति प्रकाश

रेडियो सक्रियता से सभी परिचित हैं । प्रकृति में कुछ तत्व ऐसे हैं जो हर समय एक विशिष्ट प्रकार की किरणें उत्सर्जित करते रहते हैं । किरणें उत्सर्जित करने के इसी गुण को ही वैज्ञानिक भाषा में रेडियोसक्रियता कहते हैं । और ऐसे तत्वों को रेडियोसक्रिय तत्व । रेडियोसक्रियता का भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, अंतरिक्ष विज्ञान व चिकित्सा विज्ञान में अब तक सफलतापूर्वक उपयोग हो चुका है । इन क्षेत्रों के लिए रेडियोसक्रियता कोई नया नाम नहीं है । लेकिन अब रेडियोसक्रियता ने एक नए क्षेत्र में पदार्पण किया है । वह क्षेत्र है कृषि का ।

सही मायने में रेडियोसक्रियता ने एक दशक में कृषि के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिए हैं । जिन प्रयोगों को करने में महीनों लगते थे वे अब चुटकियों में होने लगे हैं ।

शुरु-शुरु में कृषि वैज्ञानिकों को यह पता करने में बड़ी दिक्कत होती थी कि जो खाद हम पौधे को दे रहे हैं, उसका पौधे पूरा उपयोग कर रहे हैं या नहीं । रेडियोसक्रियता तत्वों से यह कार्य बड़ा आसान हो गया है । उदाहरण के लिए जैसे हम यह मालूम करना चाहते हैं कि अमुक पौधे को यदि हम फास्फेट दें तो क्या वह उसके लिए उपयोगी रहेगा ? इसके लिए करना सिर्फ इतना ही पड़ता है कि फास्फोरस का एक रेडियोसक्रिय समस्थानिक (फास्फोरस-32) को खाद में मिला देते हैं । यदि पौधे ने फास्फोरस का अवशोषण किया तो पौधे से रेडियोसक्रिय किरणें निकलने लगेंगी । पौधा जितनी अधिक मात्रा में फास्फोरस का अवशोषण करेगा, किरणें उतनी ही ज्यादा मात्रा में उत्सर्जित होंगी । इसके अतिरिक्त, इससे यह भी मालूम किया जा सकता है कि कौन-सी खाद कितनी देर बाद पौधे के शरीर में प्रविष्ट करती है और उसका संचय पौधे के कौन-से भाग में होता है ।

रेडियोसक्रियता के बल पर वैज्ञानिकों ने पेड़-पौधों के तमाम आंतरिक रहस्य जान लिए हैं कि वे कैसे भोजन करते हैं, कैसे उसे पचाते हैं, पचाने में कितना समय लगाते हैं, पच कर भोजन कहां जाता है, इत्यादि इत्यादि । रेडियोसक्रियता का ही चमत्कार है कि अब वैज्ञानिक पेड़ों को उखाड़े बिना ही मजे से यह बता देते हैं कि उनकी जड़ें जमीन में कितनी गहरी हैं ।

कृषि वैज्ञानिक रेडियोसक्रियता का उपयोग अनाज और फलों को कीटाणुरहित करने में भी लेते हैं । नए और संकर बीज भी अब इससे बनाए जाने लगे हैं । कीटनाशकों व उर्वरकों का कृषि के क्षेत्र में प्रयोग धड़ल्ले से हो रहा है । कुछ कीटनाशक व उर्वरक कृषि पदार्थों में अपना प्रभाव छोड़ जाते हैं । यहां तक कि बीज या फलों में भी इनका असर आ जाता है । ऐसे फल या बीज स्वास्थ्य के लिए बड़े घातक होते हैं । रेडियोसक्रियता ने इस समस्या का हल आसान कर दिया है । मानो किसी फलदार वृक्ष के लिए कुछ रासायनिक पदार्थ सिरदर्द हों, जो खाद से (या वायुमंडल से) होते हुए आहिस्ता-आहिस्ता वृक्ष के फलों तक पहुंच जाते हों ऐसे दुष्ट पदार्थों का पता रेडियोसक्रियता के सहारे बड़ी आसानी से लगाया जा सकता है ।

प्रयोगशालाओं में शोधकर्त्ता रेडियोसक्रियता की मदद से पौधों के उन तत्वों का अध्ययन कर सकते हैं जिनका रासायनिक तरीकों से अध्ययन करना असंभव है । रेडियोसक्रियता के द्वारा पौधों में पौष्टिक और नस्ल संबंधी परिवर्तन भी लाए जा सकते हैं । आजकल वैज्ञानिक रेडियोसक्रियता की सहायता से यह मालूम करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि विभिन्न कीड़े किस प्रकार मिट्टी से पौधों व फलों पर पहुंचते हैं । साथ ही यह भी पता लगाने की कोशिश की जा रही है कि ऐसे कौन से तत्व या रसायन हैं जो आदमी के लिए खतरनाक हो सकते हैं । निश्चय ही रेडियोसक्रियता किसानों के लिए वरदान सिद्ध हो रही है । □

ग्रामीण गोदाम

सरकार ने विभिन्न राज्यों में ग्रामीण गोदामों की व्यवस्था करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रायोजित कई योजनाएं शुरू की हैं। छठी योजना के लिए लक्ष्य 19.53 लाख मीटरी टन की भण्डारण क्षमता का सृजन करना है। 1980-81 में केन्द्रीय सहायता की प्रथम किस्म 5 लाख मीटरी टन के लक्ष्य के मुकाबले 5.15 लाख मीटरी टन की कुल क्षमता के सृजन के लिए दी गई। चालू वर्ष में भी 5.00 लाख मीटरी टन की क्षमता के सृजन का लक्ष्य जिसके मुकाबले में अब तक कुल 2.45 लाख मीटरी टन की भण्डारण क्षमता के सृजन के लिए केन्द्रीय सहायता के प्रस्ताव स्वीकृत किए गए हैं। चालू वर्ष के लक्ष्य भी पूरे किए जाने की आशा है।

ग्रामीण युवकों के लिए प्रशिक्षण शिविर

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के भाग के रूप में ग्रामीण युवाओं को अपना रोजगार धंधा शुरू कराने हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम (ट्राइसेम) युवाओं में व्याप्त बेरोजगारी को दूर करने के प्रमुख उद्देश्य से चलाया जा रहा है। इस योजना में मुख्य बल ग्रामीण युवाओं को अनिवार्य कुशलता तथा प्रौद्योगिकी सिखाने पर दिया जाता है ताकि वे अपना रोजगार धन्धा शुरू कर सकें। योजना के अन्तर्गत प्रशिक्षण की सभी पद्धतियां अपनाई जाती हैं। संस्थागत प्रशिक्षण के अलावा, प्रशिक्षण स्थानीय सेवा तथा औद्योगिक युनिटों, मास्टर शिल्पियों तथा कारीगरों और कुशल कारीगरों द्वारा दिया जा सकता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भ्रमणशील दलों, जो विकास केन्द्र वाले गांवों में शिविर लगाते हैं, के माध्यम से प्रशिक्षण देने हेतु भी बढ़ावा दिया जाता है।

ऐसी किसी भी गतिविधि को जिससे स्वरोजगार को बढ़ावा मिलता है, "ट्राइसेम" के अन्तर्गत शुरू किया जा सकता है। इसमें प्राथमिक, माध्यमिक तथा तृतीय क्षेत्रों की गतिविधियां शामिल हैं। उदाहरण के लिए बीज उत्पादन तथा विपणन, फल वाले वृक्षों की पौध लगाना, बागवानी तथा पुष्पोत्पादन, कुकुरमुत्ता, मछलीपालन, आदि जैसे पाठ्यक्रमों को प्राथमिक क्षेत्र के अन्तर्गत शुरू किया जा सकता है। माध्यमिक क्षेत्र के अन्तर्गत कुटीर दियासलाई, आतिशबाजी का सामान बनाना, अगरबत्ती, ग्रामीण कुम्हारी, घानी तेल, घरेलू उपयोग के बर्तन बनाना आदि जैसे पाठ्यक्रमों को शुरू किया जा सकता है। तृतीय क्षेत्र के अन्तर्गत, आटो-रिक्शा चलाना, खुदरा व्यापार, बैंड वादक, रेडियो तथा घड़ियों की मरम्मत तथा बायोगैस संयंत्रों आदि को लगाना तथा उनकी मरम्मत करना आदि जैसी गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाता है।

गांवों का शत प्रतिशत विद्युतीकरण

देश अगले 12 से 13 वर्षों में शतप्रतिशत विद्युतीकरण का लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। देश में 5,76,126 गांव हैं जिनमें से सितम्बर, 1981 के अन्त तक 2,77,895 गांवों में पहले ही बिजली पहुंचाई जा चुकी है। यह कुल गांवों का 48 प्रतिशत है। राज्यों की योजना में 1994-95 तक पर्याप्त संसाधनों के जरिए देश के सभी गांवों को बिजली पहुंचाने का प्रावधान है।

उद्योगों, कृषि तथा अर्थ-व्यवस्था के अन्य क्षेत्रों की संभावित मांगों को पूरा करने के उद्देश्य से छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85) में देश में 19,669 मेगावाट अतिरिक्त बिजली उत्पादन क्षमता पैदा करने का लक्ष्य रखा गया है। छठी पंचवर्षीय योजना में वर्ष 1985 के अन्त तक एक लाख अतिरिक्त गांवों में बिजली पहुंचाने तथा 25 लाख पम्प सेटों को चालू करने का लक्ष्य रखा गया है।

क्षारीय भूमि सुधार योजना

केन्द्रीय सरकार ने क्षारीय भूमि में सुधार और प्रबन्ध हेतु एक केन्द्र प्रायोजित योजना तैयार की है। 82 करोड़ रु. की लागत की यह योजना उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा में लागू की जाएगी। देश में लगभग 70 लाख हेक्टेयर क्षारीय भूमि है। इसमें से 25 लाख हेक्टेयर भूमि, सिन्धु-गंगा नदी की घाटी में है जिसमें से 9 लाख हेक्टेयर भूमि उत्तर प्रदेश, 4.5 लाख हेक्टेयर भूमि पंजाब में और 3.5 लाख हेक्टेयर भूमि हरियाणा में और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों तथा तटवर्ती इलाकों में कुल 45 लाख हेक्टेयर खारी भूमि है। इस समूची भूमि में कोई खेती नहीं होती। इस भूमि की उच्च उत्पादन क्षमता को देखते हुए और पारिस्थितिकीय संतुलन कायम करने के लिए सरकार द्वारा इसमें सुधार और प्रबंध को उच्च प्राथमिकता देने का प्रस्ताव है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अनुसंधानों से पता चला है कि क्षारीय भूमि में सुधार लाने से प्रति वर्ष औसतन पांच मी. टन प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खाद्यान्न का उत्पादन संभव हो सकेगा।

क्षारीय भूमि सुधार पर 34.1 करोड़ रु. खर्च किए जाएंगे जबकि उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा राज्य कुल 29.9 करोड़ रु. खर्च करेंगे। कृषकों का योगदान 18 करोड़ रु. का होगा।

गांवों में पीने का पानी

छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85), जिसे अन्तिम रूप बाद में दिया गया है, में समस्याग्रस्त गांवों को स्वच्छ पेय जल की व्यवस्था करने के लिए उच्च प्राथमिकता दी गई है। छठी योजना में इस प्रयोजन के लिए 2007.11 करोड़ रुपये के परिव्यय की व्यवस्था है जोकि 5वीं योजना (1974–79) में 429.27 करोड़ रुपये के परिव्यय की अपेक्षा पर्याप्त रूप में अधिक है। सभी समस्याग्रस्त गांवों को पेय की सप्लाई को नए 20 सूत्री कार्यक्रम में भी शामिल किया गया है। राज्य सरकारों से प्राप्त नवीनतम ब्यौरे यह प्रदर्शित करते हैं कि 1-4-80 को देश में लगभग 2.31 लाख गांव थे, जिन्हें प्राथमिकता के आधार पर जल पूर्ति मुहैया करना अपेक्षित है। छठी योजना के दौरान, सभी चुने गए समस्याग्रस्त गांवों को वर्षभर स्वच्छ पेय जल का एक संसाधन उपलब्ध कराने का प्रयास किया जाएगा। अब तक प्राप्त सूचना के अनुसार वर्ष 1980-81 के दौरान देश के 25,978 समस्याग्रस्त गांवों को जलपूर्ति मुहैया कराई गई।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

छठी योजना अवधि के दौरान समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत देश के प्रत्येक खण्ड के प्रति गरीब 3000 परिवारों को सहायता दी जाएगी। अनुमान है कि सारे देश में इससे 1.5 करोड़ परिवार लाभान्वित होंगे। योजना में कार्यक्रम के लिए 1500 करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था है। छोटे किसानों, मझौले किसानों और कृषि मजदूरों तथा आदिवासियों को क्रमशः 25 प्रतिशत, 33 1/3 प्रतिशत तथा 50 प्रतिशत की आर्थिक सहायता दी जाएगी। गरीब परिवारों को सहकारी समितियों तथा वाणिज्यिक बैंकों से ऋण के रूप में लगभग 3000 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता दी जाएगी। 1980-81 वर्ष के दौरान कार्यक्रम के अन्तर्गत 200 करोड़ रुपये की ऋण सहायता दी गई। जिससे छोटे/मझौले किसानों तथा ग्रामीण कारीगरों को भी लाभ हुआ। छठी योजना अवधि के दौरान कार्यक्रम के अन्तर्गत निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए ऋण देने के हर सम्भव प्रयास किए जा रहे हैं। योजना के सदस्य-सचिव की अध्यक्षता के अधीन एक उच्च स्तरीय समिति गठित की गई है जो समय-समय पर कार्यक्रम की प्रगति की समीक्षा करेगी और प्रगति के मार्ग में आने वाली अड़चनों को दूर करेगी। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम नए 20 सूत्री कार्यक्रम का भी एक हिस्सा है। समय-समय पर बैंकों को आदेश दिए जाते हैं कि वे कमजोर वर्गों तथा बीस-सूत्री कार्यक्रम से लाभान्वित होने वाले लोगों को ऋण देने के कार्यक्रम में तेजी लाएं।

परिव्यय

छठी पंचवर्षीय योजना में, केन्द्रीय क्षेत्र में, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई.आर.डी.पी.) के लिए 750 करोड़ रु. तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एन. आर. ई. पी.) के लिए 980 करोड़ रु. की व्यवस्था की गई। यह कार्यक्रम सभी राज्य और केन्द्रशासित प्रदेशों में चल रहे हैं। सूखा उन्मुख क्षेत्र कार्यक्रम (डी.पी.ए.पी.) के लिए 175 करोड़ रु तथा मरुभूमि विकास कार्यक्रम (डी. डी. पी.) के लिए 50 करोड़ रु. के परिव्यय की व्यवस्था की गई है। यह कार्यक्रम चुनिन्दा क्षेत्रों के लिए हैं।

भूमि रिकार्डों का नवीनीकरण

उन सभी राज्यों में जहां भूमि सम्बन्धी रिकार्डों का नवीनीकरण नहीं किया गया है, भूमि के रिकार्डों का नवीनीकरण करने के लिए एक कार्यक्रम हाथ में लिया गया है।

आंध्र प्रदेश, बिहार, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, पंजाब, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश राज्यों के भू-स्वामियों को पास बुकें जारी की जा रही हैं।

अतिरिक्त घोषित की गई 8 लाख हेक्टेयर भूमि को अधिकार में लेने और इसके वितरण में हुई देरी के बारे में बताया गया है कि न्यायालयों में पड़े अनिर्णीत मामलों के कारण घोषित अतिरिक्त भूमि पर कब्जा करने और इसका वितरण करने में देरी हुई है। □

स्वर्ण पदक प्राप्त किया

अमरावती जिले का बोरगा व पेठ अपने किस्म का अनूठा गांव है। सरपंच श्री सदानन्द जयस्वाल कालेज की शिक्षा समाप्त होने के बाद नौकरी की तलाश करते रहे। बाद में निराश होकर अपने पिता की थोड़ी-सी जमीन जोतने लगे। खेती के नए तरीके अपनाए। आज वह प्रगतिशील किसान हैं। राज्य सरकार ने उन्हें स्वर्ण पदक प्रदान किया है। उन्हीं के प्रयासों के फलस्वरूप अब गांव के लोगों में यदि विवाद खड़ा हो जाए तो उन्हें अदालत में जाना नहीं पड़ता। वे आपस में ही अपनी समस्याएं सुलझा लेते हैं। □

दिगंबर स्वादिया
प्रादेशिक अधिकारी
महाराष्ट्र और गोवा
3, विद्या विहार, पूणे-16

खुशहाली की ओर बढ़ते कदम

श्री राम चंद्र सिंह उत्तर प्रदेश के जनपद वाराणसी में स्थित विकास खंड चोलापुर में ग्राम चाहिन के निवासी हैं तथा इनके पास कृषि योग्य कुल भूमि 92 डिसमिल है तथा सीमान्त कृषक की श्रेणी में आते हैं। परिवार में इनकी पत्नी के अतिरिक्त तीन पुत्र एवं दो पुत्रियां हैं, जिनके भरण एवं पोषण का उत्तरदायित्व इनके ऊपर है। बेकारी एवं बेरोजगारी की समस्या से परेशान एवं आर्थिक बोझ अधिक होने पर इन्होंने इसका जिक्र विकास विभाग के कार्यकर्ताओं से किया तथा सरकार द्वारा छोटे कृषकों एवं सीमान्त कृषकों के लिए चलाई जा रही योजनाओं द्वारा अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने की इच्छा व्यक्त की। इनके बारे में संपूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेने के पश्चात् विकास कार्यकर्ताओं द्वारा इनको ट्राइसेम योजना और उसके महत्व के बारे में बताया गया तथा इस बात के लिए प्रेरित किया गया कि ये अपने बड़े लड़कों में से किसी एक को ट्राइसेम योजना में साबुन निर्माण प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु भेजें। इसका परिणाम यह हुआ कि इनके द्वितीय पुत्र श्री गोरखनाथ सिंह साबुन निर्माण प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु राजी हुए और उन्हें सघन क्षेत्र विकास समिति, सेवापुरी, वाराणसी में साबुन निर्माण की तकनीकी जानकारी प्राप्त करने हेतु तीन माह के प्रशिक्षण के लिए भेजा गया। प्रशिक्षण के दौरान सहायता के रूप में इन्हें एक सौ रुपये की मासिक छात्रवृत्ति तथा प्रशिक्षण संस्था को प्रशिक्षण पर होने वाले व्यय को वहन करने के लिए सरकार द्वारा पचास रुपये प्रदान किए गए।

प्रशिक्षण में भेजने के पश्चात् प्रशिक्षणार्थी के पिता से साबुन उद्योग स्थापना हेतु ऋण आवेदन-पत्र भरवा लिया गया तथा उसे जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से बैंक को प्रेषित किया गया। श्री रामचंद्र सिंह के पुत्र द्वारा तीन माह का प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् जून 1980 में बैंक द्वारा श्री रामचंद्र सिंह को साबुन उद्योग इकाई की स्थापना हेतु 9000/-रुपये का ऋण, उपकरण एवं कच्चा माल क्रय करने हेतु दिया। उपकरण एवं कच्चा माल क्रय करा दिया गया। उक्त उपकरण एवं कच्चे माल से इन्होंने साबुन निर्माण का कार्य अपने गांव में शुरु किया। सरकार द्वारा एकीकृत ग्राम विकास योजना के अंतर्गत इन्हें उक्त [illegible] दान के रूप में प्रदान की गई ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार योजना के अंतर्गत कृषकों को प्रोत्साहन मिल सके।

साबुन निर्माण कार्य आरम्भ करने के पूर्व इनकी मासिक आय दो सौ रुपये प्रति माह के लगभग थी तथा इतनी अल्प आय में न तो अपने बाल बच्चों का भरण पोषण अच्छी प्रकार से करने में समर्थ थे और न ही उन्हें अच्छी शिक्षा-दीक्षा दिला पाने में समर्थ थे। साबुन उद्योग स्थापना के पश्चात् इसके समक्ष अनेक व्यावहारिक कठिनाइयां आईं जैसे स्वयं साबुन तैयार कर उसकी बिक्री एवं प्रचार का उत्तरदायित्व भी इन्हीं के ऊपर पड़ा परन्तु इसके बावजूद इन्होंने धैर्य नहीं छोड़ा तथा पूर्ण लगन एवं निष्ठा से ये स्वयं तथा इनके पुत्र साबुन निर्माण कार्य में लगे रहे। आरम्भ के कुछ माह में इनकी मासिक शुद्ध आय दो सौ रुपये से लेकर छः सौ रुपये तक हो गई तथा अब इनके पास इतना समय नहीं बचता कि ये अनावश्यक इधर-उधर घूम फिर सकें।

साबुन निर्माण कार्य ये एक वर्ष से कर रहे हैं तथा इन्होंने निर्मित होने वाले साबुन का नाम "श्री राम सोप" रखा है तथा इसकी बिक्री विकास खंड की सीमा के अतिरिक्त धीरे-धीरे अन्य विकास खंडों में भी शुरू हो गई है। साबुन निर्माण में प्रयुक्त होने वाली सामग्री का क्रय ये वाराणसी में थोक विक्रेता से करते हैं।

कृषि योग्य भूमि से रबी तथा खरीफ में ये मात्र इतना अनाज उत्पादित कर पाते हैं जिससे इनके परिवार का भरण-पोषण हो सके। वर्तमान में ये अपने उद्योग के प्रति आशान्वित हैं तथा शासन द्वारा विकास हेतु चलाई जा रही योजनाओं का स्वयं भी प्रचार करते हैं तथा इस बात को स्वीकार करते हैं कि उनकी आर्थिक स्थिति में आशातीत परिवर्तन हुआ है और अब उनका परिवार आर्थिक चिन्ता से मुक्त सुख की नींद सोता है। □

खण्ड विकास अधिकारी
चोलापुर (वाराणसी)

RN 708/57
P & T Regd. No D (DN) 98
Licenced under U (D)-55 to
post without pre-payment at Civil Lines Post Office, Delhi

हर्ष और उल्लास की मंजरियां

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा
प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद, द्वारा मुद्रित